2862
શ્રી યશોવિજયજી
જૈન ગ્રંથમાળા
દાદાસાહેબ, ભાવનગર.
ફોન : ૦૨૭૮-૨૪૨૫૩૨૨
૩૦૦૪૮૪૬

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat
www.umaragyanbhandar.com

व्वतित्थयरनिद्दिट्ठं माहणकुंडग्गामाओ नयराओ उसभ-
ा माहणस्स भारियाए देवाणंदाए माहणीए जालंधरस
: कुच्छीओ खत्तियकुंडग्गामे नयरे नायाणं खत्तियाणं
थस्स खत्तियस्स कासवगुत्तस्स भारियाए तिसलाए
याणीए वासिट्ठस गुत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहरा
ए इति ।

टीका—ततः श्रेयः खलु ममापि किं तदित्याह श्रमणभगवंत
ोरं चरमतीर्थंकरं पूर्वतीर्थंकरैर्निर्दिष्टं ब्राह्मणकुंडग्रामात्
त् ऋषभदत्तस्य ब्राह्मणस्य भार्यायाः देवानंदायाः
णयाः जालंधरसगोत्रायाः कुक्षेर्मध्यात् क्षत्रियकुंडग्रामे
ज्ञातानां श्रीऋषभदेवस्वामिवंश्यानां क्षत्रियविशेषाणां
सिद्धार्थस्य क्षत्रियस्य काश्यपगोत्रस्य भार्यायाः त्रिश-
ाः क्षत्रियाण्याः वाशिष्ठसगोत्रायाः कुक्षौ गर्भतया
ायितुं इति ।

अर्थ—विस्तीर्ण अवधिज्ञान धारण करनेवाले श्रीइन्द्र-
ाज ने देवानंदा ब्राह्मणी की कुक्षि में श्रीवीर प्रभु को
वर्यरूप उत्पन्न हुए देख कर अपने मन में विचार किया कि
सेयं खलु ममवि—ततः श्रेयः खलु ममापि]
त् उससे कल्याण निश्चय मेरा भी है। क्या कल्याणक है
बताते हैं कि पूर्व तीर्थंकरों ने बताया है कि श्रमण भगवान्
वीर चरम [छेले] तीर्थंकर को ब्राह्मण कुंडग्राम नगर से
भदत्त ब्राह्मण की भार्या [स्त्री] जालंधरस गोत्रवाली

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

देवानंदा ब्राह्मणी की कुक्षि के मध्य से क्षत्रिय कुंडग्राम नगर में श्रीऋषभदेव स्वामी के वंशवाले क्षत्रिय विशेष के मध्य में काश्यप गोत्रवाले सिद्धार्थ क्षत्रिय की भार्या वाशिष्टस गोत्रवाली त्रिशला क्षत्रियाणी की कुक्षि में गर्भपने से जो स्थापन करने वह कल्याणक रूप है इति।

यहाँ पर बुद्धिमान् पुरुषों को पक्षपात-रहित विचार करना उचित है कि जब सूत्रकार तथा टीकाकार महाराजों ने लिखा है कि श्रीइन्द्र महाराज ने श्रीवीर प्रभु को त्रिशला रानी की कुक्षि में स्थापन करने के लिये देवानंदा की कुक्षि से श्रीवीर गर्भापहार को [सेयं–श्रेयः] इस वाक्य द्वारा अपना कल्याण रूप माना है तो उक्त श्रीवीर गर्भापहार को सूत्र-विरुद्ध अत्यंत निंदनीयरूप अकल्याणकरूप मानना यह पूर्ण अविचार है वा नहीं ? और भी देखिये तपगच्छनायक श्रीकुलमंडन सूरिजी महाराज विरचित श्रीकल्पसूत्र अवचूरि में लिखा है कि तीर्थंकर श्रीऋषभदेव स्वामी तथा अन्य तीर्थंकरों ने भी तीर्थंकर श्रीवर्द्धमान स्वामी के च्यवन आदि ६ कल्याणकों का हेतुरूप काल और समय को प्रतिपादन किया है, सो बताते हैं। कल्पसूत्र अवचूरि का पाठ। यथा—

यौ कालसमयौ भगवता ऋषभदेवस्वामिना अन्यैश्च तीर्थकरैः श्रीवर्द्धमानस्य षण्णां च्यवनादीनां कल्याणकानां हेतुत्वेन कथितौ तावेवेति ब्रमः पंच हत्थुत्तरे होत्थेति हस्तादुत्तरस्यां दिशि वर्तमानत्वात् हस्तोत्तरा हस्त उत्तरो यासां वा ता हस्तोत्तरा उत्तराफाल्गुन्यः बहुवचनं बहु कल्याणकापेक्षं पंचसु च्यवन १, गर्भापहार २, जन्म ३,

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

दीक्षा ४, ज्ञान ५, कल्याणकेषु हस्तोत्तरा यस्य सः तथा ६ निर्वाणस्य स्वातौ जातत्वादिति ।

इस पाठ में श्रीकुलमंडन सूरिजी ने श्रीवीरगर्भापहार को कल्याणकरूप ही मान कर श्रीवीर परमात्मा के ६ कल्याणक बतलाये हैं। तथा श्रीपृथ्वीचंद्रसूरिजी विरचित श्रीपर्युषण कल्प टिप्पनी का पाठ। यथा—

हस्त उत्तरो यासां ता बहुवचनं बहुकल्याणकापेक्षं इत्यत्र पंचसु पंच स्वातौ ६ षष्ठमेव ध्वन्यते इति ।

अर्थ—इस पाठ में मूल कल्पसूत्र पाठ के अनुसार श्रीपृथ्वीचंद्रसूरिजी महाराज ने श्रीवीरप्रभु के पाँच कल्याणक हस्तोत्तरा नक्षत्र में और स्वाती नक्षत्र में छठवाँ मोक्ष कल्याणक बताया है। और श्रीआगमिकगच्छ नायक श्रीमत् जयतिलकसूरिजी महाराज रचित मुद्रित सुलसाचरित्र में सर्ग ६ श्लोक ४६ का पाठ। यथा—

सिद्धार्थराजांगजदेवराज, कल्याणकैः षड्भिरितिस्तुतस्त्वाम्।
तथा विधेह्यंतरवैरिषट्कं, यथा जयाम्यासु तव प्रसादात् । ४६ ।

भावार्थ—इस श्लोक से श्रावक अंबड परिव्राजक ने समवसरण में श्रीवीर प्रभु के सन्मुख ६ कल्याणकों से स्तुति की है, अतएव उपर्युक्त सूरिजी महाराज ने भी श्रीमहावीर प्रभु के आगम-संमत ६ कल्याणकों का प्रतिपादन किया है। प्रिय पाठकगण! उपर्युक्त अनेक शास्त्रीय पाठों से सिद्ध होता है कि देवानंदा ब्राह्मणी की कुक्षि से गर्भापहार के द्वारा त्रिशला माता की कुक्षि में गर्भपणे से श्रीवीरप्रभु आये, वह कल्याणक रूप है, इसको अपनी प्रतिज्ञानुसार श्रीआनंदसागर जी स्वीकार

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

करें ; अन्यथा निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर प्रकाशित करने आनंदसागर जी को उचित हैं—

१ [प्रश्न] आपके गच्छ के विनयविजयजी ने कल्पसूत्र सुबोधिका टीका में लिखा है कि—

"नीचैर्गोत्रविपाकरूपस्य अतिनिंद्यस्य आश्चर्यरूपस्य गर्भापहारस्यापि कल्याणकत्वकथनं अनुचितं ।"

अर्थात् इस वाक्य पंक्ति में आपके उक्त उपाध्याय जी ने त्रिशला माता की कुक्षि में स्थापन करने रूप श्रीवीर गर्भापहार को नीचगोत्र विपाकरूप अत्यंत निंदनीयरूप अकल्याणकरूप जो लिखा है सो किस सूत्र के आधार से लिखा है ? क्योंकि कल्पसूत्र मूल पाठ में [गब्भाओ गब्भं साहरिए] अर्थात् देवानंदा के गर्भ से त्रिशलारानी के गर्भ में श्रीवीर प्रभु को स्थापन किये सो इन्द्र महाराज ने उपर्युक्त पाठ के अनुसार [सेयं—श्रेयः] कल्याणक रूप माना है इसलिये आपके उपाध्याय जी का उक्त कथन सूत्रविरुद्ध है या नहीं ?

२ [प्रश्न] पंचाशक प्रकरण टीका के प्रमाणानुसार श्रीवीर प्रभु के आप एकांत से पाँच कल्याणक मानते हैं तो उक्त पंचाशक प्रकरण ग्रंथ के पाठानुसार तपगच्छ के श्रावकों को सामायिक लेने में प्रथम करेमिभंते का उच्चारण करके पीछे इर्यावही करना इसको आप एकांत से मानियेगा या नहीं ?

३ [प्रश्न] पंचाशक मूलपाठ तथा टीकापाठ से आप श्रीवीर प्रभु के पाँच कल्याणक मानते हैं तो उसी प्रकरण के मूलपाठ तथा टीकापाठ में "आभवमखंडा" पर्यंत जय वियराय बोलना बताया है तो आप उस मर्यादा को नित्य त्याग कर अधिक करना क्यों मानते हैं ?

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

४ [प्रश्न] पंचाशक पाठ के अनुसार श्रीवीरतीर्थंकर के पाँच कल्याणक मानते हैं तो पंचाशक टीका में [पोषधः पर्वदिना ऽनुष्ठानम्] इस वाक्य से पोषध व्रत पर्व दिन का अनुष्ठान लिखा है और आप पोषध व्रत को अपर्व दिनों का भी अनुष्ठान मानते हैं, सो पंचाशक टीका के उक्त वाक्य से संमत है या नहीं ?

५ [प्रश्न] पंचाशक मूल तथा टीका में यह नहीं लिखा है कि देवानंदा की कुक्षि से गर्भापहार द्वारा त्रिशलारानी की कुक्षि में श्रीवीर प्रभु को स्थापन किया सो अत्यंत निंदनीयरूप तथा अकल्याणकरूप है, तथापि आपके धर्मसागरजी इत्यादि ने अपनी रची हुई कल्पसूत्र की टीकाओं में उक्त प्रकार की नवीन उत्सूत्र प्ररूपणा लिखी है और आप लोग भी उसी प्ररूपणा को एकांत आग्रह से मानते हैं और उक्त प्ररूपणा करते हैं, सो पंचाशक पाठ से विरुद्ध है या नहीं ?

६ [प्रश्न] कल्पसूत्र में श्रीनेमनाथ स्वामी के १८ गणधर लिखे हैं परंतु श्रीहरिभद्रसूरिजी ने किसी अपेक्षा से आवश्यक टीका में ११ गणधर लिखे हैं उसी प्रकार पंचाशक में भी श्रीवीर प्रभु के ५ कल्याणक ४८० तीर्थंकरों के पाँच पाँच कल्याणकों को बतलाने की अपेक्षा से लिखे हैं। जैसे आवती चौवीसी में श्रीपद्मनाभ तीर्थंकर के गर्भ जन्म आदि पाँच कल्याणक श्रीवीर प्रभु के दृष्टांत द्वारा बताने पर देवानंदा ब्राह्मणी के कुक्षि से गर्भापहार के द्वारा त्रिशलारानी की कुक्षि में श्रीवीर प्रभु का आना अथवा नीचकर्मविपाकरूप नरक से श्रीपद्मनाभ तीर्थंकर महाराज का अपनी माता की कुक्षि में आना अत्यंत निंदनीयरूप अकल्याणकरूप मानना विरुद्ध है, किंतु गर्भापहारद्वारा श्रीवीर प्रभु का त्रिशला माता की कुक्षि में आना इसको प्रसंशनीयरूप एवं कल्याणकरूप ही मानना उचित है तो आप

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

लोग अकल्याणकरूप अत्यंतनिंदनीयरूप किस कारण से मानते हैं ?

७ [प्रश्न] श्रीवीर प्रभु का च्यवन और देवानंदा ब्राह्मणी की कुक्षि से गर्भापहार होना इत्यादि [सेयं–श्रेयः] कल्याणकरूप ६ वस्तुओं को माना है और तपगच्छ वाले भी उत्तमता से मानना स्वीकार करते हैं तो फिर देवानंदा ब्राह्मणी की कुक्षि में श्रीवीर प्रभु उत्पन्न हुए उसको तो कल्याणकरूप आश्चर्यरूप मानना और त्रिशला माता की कुक्षि में श्रीवीर प्रभु गर्भापहार द्वारा आये उसको अत्यंतनिंदनीयरूप तथा अकल्याणकरूप बतलाना यह किस आगम के आधार से ? सो पाठ दिखलाइये। अन्यथा आपके गच्छ के धर्मसागरजी वगैरह का उक्त वचन आगम-संमत न होने से प्रमाण नहीं किये जायँगे।

८ [प्रश्न] यह एक नियम है कि श्रीतीर्थंकर महाराज अपनी माता की कुक्षि में आकर उत्पन्न होते हैं उसी को कल्याणकरूप माना जाता है तो ८३ में दिन की रात्रि को देवानंदा की कुक्षि से त्रिशला माता की कुक्षि में श्रीवीर तीर्थंकर आकर ६ महीना और १४॥ दिन रात्रि पर्यंत अंगोपांग से उत्पन्न हुए, उसको आप लोग किस शास्त्रों के पाठ प्रमाणों से अति निंदनीय-रूप और अकल्याणकरूप बतलाते हैं ?

९ [प्रश्न] श्रीतीर्थंकर महाराज जिस समय में अपनी माता की कुक्षि में गर्भपने से आते हैं और उस समय में माता १४ स्वप्नों को देखती है, उसीको कल्याणकरूप मानते हैं। यह एक सर्व-संमत पक्का नियम है तो श्रीवीर तीर्थंकर देवानंदा ब्राह्मणी की कुक्षि से श्रीत्रिशला माता की कुक्षि में जिस समय गर्भपने से आये उस समय माता ने १४ स्वप्नों को देखा, उसको कल्याणक-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

रूप न मान कर अत्यंत निंदनीयरूप तथा अकल्याणकरूप आप लोग किस सिद्धांत-पाठों से मानते हैं ?

१० [प्रश्न] जिस समय में श्रीतीर्थंकर महाराज अपनी माता की कुक्षि में आते हैं उस अवसर में माता १४ स्वप्नों को देखकर अपने पति से निवेदन करती है। राजा सुनकर स्वप्न-लक्षण पाठकों को बुला के उन स्वप्नों का फल पूछता है। उसीको कल्याणकरूप माना जाता है। इसी प्रकार श्रीवीरप्रभु जिस समय त्रिशलारानी के गर्भ में आये उस समय माता ने १४ स्वप्नों को देखा और उसके अनंतर श्रीसिद्धार्थ राजा से निवेदन किया। राजा ने सुन कर प्रातःकाल में महोत्सव के साथ स्वप्न-लक्षण-पाठकों से फल पूछा तो पंडितों ने स्वप्नों का फल बताया कि इस से कल्याणकारी तीर्थंकर पुत्र उत्पन्न होंगे। ऐसा उत्तमोत्तम उन स्वप्नों का फल सुनकर राजादि आनंदित हुए। उसको आप लोगों ने एकांत पाँच ही कल्याणक के आग्रह से अति निंदनीय-रूप अकल्याणकरूप किस प्रमाण से मान लिया है ?

११ [प्रश्न] श्रीऋषभादि तीर्थंकर महाराज अपनी अपनी माता की कुक्षि में आये, उसको शास्त्रकारों ने कल्याणक रूप माना है। उसी प्रकार श्रीवीर तीर्थंकर त्रिशलामाता की कुक्षि में आये उसको श्रीभद्रबाहु स्वामी आदि अनेक आचार्यों ने कल्याणकरूप ही माना है, तथापि आपके धर्मसागरजी आदि उपाध्यायों ने उसको अकल्याणकरूप सिद्ध करने के लिये जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति के पाठ से श्रीऋषभदेव स्वामी के राज्याभिषेक को कल्याणक मानना बताया है। परंतु इससे भी अधिक कई तीर्थंकर महाराजों के चक्रवर्तित्व आदि राज्याभिषेक हुए हैं उनको भी आप कल्याणक मानोगे या नहीं ? अगर यह कहोगे कि तीर्थंकर के राज्याभिषेकों को कल्याणक नहीं मानेंगे, क्योंकि श्रीभद्रबाहु

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

स्वामी तथा टीकाकार महाराजों ने कल्पसूत्र में [चउ उत्तरासाढे अभीइ पंचमे हुत्था—चत्वारि कल्याणकानि उत्तराषाढायां पुनः अभिजिन्नक्षत्रे पंचमं कल्याणकं अभवत्] इन वाक्यों से श्रीऋषभदेव स्वामी के पाँच कल्याणक बताये हैं और पंचाशक में ४८० तीर्थंकरों के पाँच पाँच कल्याणक बताने की अपेक्षा से श्रीवीरप्रभु के पाँच कल्याणक लिखे हैं, सो मानेंगे तो हम भी कहते हैं कि श्रीभद्रबाहु स्वामी ने श्रीकल्पसूत्र मूलपाठ में देवलोक से देवानंदा ब्राह्मणी की कुक्षि में श्रीवीर प्रभु आये, माता ने १४ स्वप्ने देखे और प्रथम श्रीइन्द्र महाराज ने [तं सेयं खलु ममवि—ततः श्रेयः खलु ममापि] इन वाक्यों के द्वारा श्रीवीर गर्भापहार से निश्चय अपना भी कल्याण माना है तो कल्याणकरूप श्रीवीर गर्भापहार को आपके धर्मसागरजी वगैरह ने उक्त सूत्रपाठ मंतव्य-विरुद्ध नवीन उत्सूत्र प्ररूपणा करके श्रीत्रिशलामाता की कुक्षि में स्थापन करनेरूप श्रीवीर गर्भापहार को अकल्याणकरूप अत्यंत निंदनीयरूप क्यों माना ? और आप वैसा क्यों मानते हैं ? अगर इस विषय से संमत मूल आगमपाठ हो तो बतलाइये ; अन्यथा श्रीतीर्थंकर महाराजों का आपनी माता की कुक्षि में आना अनादि काल की रीति के अनुसार कल्याणकरूप प्रसंशनीयरूप ही माना जायगा। कौन भाग्यशाली इस उचित वृत्तान्त में मना कर सकता है ?

१२ [प्रश्न] और भी देखिये कि पंचाशक में [आषाढ़ सुद्ध छट्ठी चेत्ते तह सुद्ध तेरसी] इत्यादि वाक्य से आषाढ़ सुदी ६ की मध्य रात्रि के समय में देवलोक से देवानंदा ब्राह्मणी की कुक्षि में श्रीवीर तीर्थंकर आकर आश्चर्यरूप गर्भपने से उत्पन्न हुए उसको कल्याणकरूप लिखा है और चैत्र सुदी १३ को

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

त्रिशला माता जी की कुक्षि से श्रीवीर प्रभु का जन्म हुआ उसको भी कल्याणकरूप बतलाया है परंतु श्रीकल्पसूत्र के [आसोअ बहुलस्स तेरसी पक्खेणं] इस वाक्यानुसार आश्विन कृष्ण १३ की मध्य रात्रि के समय देवानंदा ब्राह्मणी के कुक्षि से श्रीत्रिशलामाता की [कुच्छिंसि गब्भताए साहरिए] कुक्षि में श्रीवीर प्रभु को गर्भपने से कल्याणकरूप स्थापन किये गये, इस अधिकार को पंचाशक में नहीं लिखा। इसका कारण यह है कि पंचाशक में श्रीवीर प्रभु के [गब्भाइ दिणा] इत्यादि वाक्य से गर्भ, जन्म आदि ५ कल्याणक दिनों को बताकर नीचे यह लिखा है कि [सेसाणवि एवं विय णिय णिय तित्थेसु विण्णेया] अर्थात् इस वाक्य से ऋषभादि ४८० तीर्थकरों के भी गर्भ जन्मादि पाँच पाँच कल्याणक दिनों को इसी प्रकार याने श्रीवीर गर्भ जन्मादि ५ दिनों की तरह सर्व तीर्थकरों के निज निज तीर्थों में जान लेना उचित है। इस कथन से श्रीहरिभद्रसूरि जी महाराज ने श्री ऋषभादि सर्व तीर्थकरों के गर्भ जन्म आदि पाँच पाँच कल्याणक दिन बताने को अपेक्षा से और दूसरे तीर्थकरों का गर्भापहार नहीं हुआ है इस अपेक्षा से श्रीवीर प्रभु के गर्भ जन्म आदि पाँच कल्याणक दिनों को दृष्टांत द्वारा लिखे हैं और गर्भापहार नहीं लिखा, इससे गर्भापहार के द्वारा श्रीवीर तीर्थकर त्रिशलामाता की कुक्षि में आये सो अप्रामाणिक वा अत्यंत निंदनीयरूप अकल्याणकरूप है, ऐसा किसी शास्त्र से सिद्ध नहीं हो सकता है तो एकांत आग्रह से आपके उक्त उपाध्यायजी ने वैसा किस पंचांगी प्रमाणों से मान लिया है? सो पाठ दिखलाइये।

१३ [प्रश्न] आप लोग अन्य तीर्थकरों के चक्रवर्तित्व आदि राज्याभिषेकों को त्यागकर केवल ऋषभदेव तीर्थकर के राज्या-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भिषेक को कल्याणक मानना बताते हैं, परन्तु शास्त्रकारों ने श्रीतीर्थंकर महाराज अपनी माता की कुक्षि में गर्भपने से आते हैं उसी को कल्याणक रूप माना है। इसीलिये श्रीवीर तीर्थंकर त्रिशलामाता की कुक्षि में गर्भपने से आये उसको कल्याणक रूप मानते हैं। इस नियमानुसार शास्त्रकार महाराजों ने तीर्थंकरों के राज्याभिषेक को भी कल्याणक मानना लिखा हो तो शास्त्र-पाठ बतलाइये? हम मानने को तैयार हैं, अन्यथा किस तरह मानेंगे?

१४ [प्रश्न] श्रीमहावीर तीर्थंकर गर्भापहार द्वारा देवानंदा ब्राह्मणी के गर्भ से माता त्रिशलारानी के गर्भ में आये उसी तरह श्रीऋषभदेव तीर्थंकर ब्राह्मणी आदि अन्य माता के गर्भ से गर्भापहार द्वारा श्रीमरूदेवी माता के गर्भ में आये हों तो श्रीऋषभदेव स्वामी के भी ६ कल्याणक मानने के लिये खरतरगच्छ वाले तैयार हैं, किंतु शास्त्रों में वैसा पाठ हो तो तपगच्छ वाले बतलावें, अन्यथा श्रीवीर तीर्थंकर के ६ कल्याणकों की तरह श्रीऋषभदेव स्वामी के भी ६ कल्याणक दृष्टांत दार्ष्टांतिक भाव की तुल्यता से मानना वा बताना नहीं घटता है और श्रीवीर तीर्थंकर गर्भापहार के द्वारा श्रीत्रिशलामाता की कुक्षि में आये हैं वह कल्याणकरूप मानना, सब तीर्थंकर अपनी अपनी माता की कुक्षि में आये हैं, वह कल्याणक रूप माने गये हैं उस दृष्टांत द्वारा घटता है, उसको न मानकर नीचगोत्रविपाक-रूप अत्यंत निंदनीयरूप अकल्याणकरूप मानना तपगच्छ वाले बताते हैं, इसलिये यह सर्वथा सिद्धांत-विरुद्ध उत्सूत्र प्ररूपणा क्यों करते हैं?

१५ [प्रश्न] श्रीवीर तीर्थंकर आश्चर्य रूप देवानंदा ब्राह्मणी की कुक्षि में गर्भपने से आये उसी को कल्याणकरूप

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

मानना और श्रीत्रिशलारानी की कुक्षि में गर्भपने से आये उसको अकल्याणकरूप अत्यंत निंदनीयरूप मानना, यह आप लोगों का प्रत्यक्ष अन्याय है या नहीं ?

१६ [प्रश्न] और भी सुनिये। १९ वें तीर्थंकर प्रभावती माता की कुक्षि से आश्चर्यरूप स्त्री के स्वरूप से मल्लीकुमारी हुई उसको कल्याणकरूप मानते हैं और २४ वें तीर्थंकर गर्भापहार के द्वारा त्रिशलामाता की कुक्षि में गर्भपने से आये उसको अत्यंत निंदनीयरूप अकल्याणकरूप आपके उक्त उपाध्याय जी ने लिखा है सो उपर्युक्त कल्पसूत्र के रचयिता श्रीश्रुतकेवली चतुर्दशपूर्वधर श्रीभद्रबाहु स्वामी के वचन से अथवा अवधी ज्ञानी श्रीइन्द्र महाराज के उक्त वचन से विरुद्ध है या नहीं ?

१७ [प्रश्न] यदि तपगच्छ वाले कहें कि खरतरगच्छ के श्रीजिनवल्लभसूरिजी ने गर्भापहार द्वारा श्रीवीर तीर्थंकर त्रिशलामाता की कुक्षि में आये उसको कल्याणकरूप कथन किया है तो खरतरगच्छ वाले अनेक आचार्यों के रचित ग्रन्थों के प्रमाणों से बता रहे हैं कि जैसा देवानंदा ब्राह्मणी की कुक्षि में गर्भपने से भगवान् का आना हुआ यह आश्चर्यरूप कल्याणकरूप है वैसाही माता त्रिशलारानी की कुक्षि में गर्भपने से श्रीवीर तीर्थंकर का आना हुआ वह भी आश्चर्य्यरूप कल्याणक रूप है इत्यादि सत्य स्वरूप से श्रीनवांगसूत्र टीकाकार श्रीअभयदेव सूरिजी के प्रधान शिष्य श्रीजिनवल्लभ सूरिजी महाराज ने विषमवादी अज्ञानी चैत्यवासियों के सन्मुख जो कथन किया है वह आगमसंमत है अतएव उक्त महाराज के नाम से गणधर सार्द्धशतक वृहट्टीकाकार महाराज ने [विधिः आगमोक्तः षष्ठ कल्याणक रूपश्च] इत्यादि पाठ से विधि जो आगम में कही

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

हुई देवानंदा ब्राह्मणी की कुक्षि से गर्भापहार द्वारा त्रिशलामाता की कुक्षि में गर्भपने से श्रीवीर तीर्थंकर का आना हुआ वह छट्ठाँ कल्याणकरूप है इत्यादि समुचित लिखा है। क्योंकि उपर्युक्त कल्पसूत्रादि अनेक पाठों के अनुसार श्रीऋषभादि तीर्थंकरों ने तथा श्रीइन्द्र महाराज और श्रीभद्रबाहु स्वामी आदि अनेक आचार्यों ने कल्याणकरूप कथन किया है, उसको विषमवादी वा निंदातत्पर तपगच्छ के धर्मसागरजी आदि उपाध्यायों ने कल्पकिरणावली आदि टीकाओं में सिद्धांत-विरुद्ध नीचगोत्र-विपाकरूप, अत्यंतनिंदनीयरूप, अकल्याणकरूप मानने की जो नवीन प्ररूपणा की है वह सर्व प्रकार से अनुचित है। इसलिये उक्त उपाध्याय महाराजों की यह उक्त नवीन प्ररूपणा मूलकल्प सूत्रादि किसी आगम से संमत हो तो वह पाठ आप बतलाइये?

१८ [प्रश्न] नरक से निकल कर श्रीतीर्थंकर महाराज अपनी माता की कुक्षि में आते हैं उसी को कल्याणकरूप माना जाता है तो हरणगमेषी देव के द्वारा देवानंदा ब्राह्मणी की कुक्षि से गर्भापहार से निकलकर श्रीवीर तीर्थंकर त्रिशला माता की कुक्षि में आये इसमें क्या अयुक्त हुआ कि उसको अत्यंत निंदनीयरूप, अकल्याणकरूप आपके उक्त उपाध्यायजी ने मान लिया है और आप भी वैसा ही मानते हैं?

१९ [प्रश्न] यदि तपगच्छ वाले कहें कि देवानंदा ब्राह्मणी की कुक्षि से श्रीवीर गर्भापहार आश्चर्यरूप है इसलिये उसको नीचगोत्रविपाकरूप, अत्यंत निंदनीयरूप, अकल्याणकरूप हमारे उक्त उपाध्याय महाराजों ने मानकर कल्याणकरूप नहीं माना है और हम भी उनके मंतव्यानुसार वैसाही मानते हैं तो हम मैत्री भावना करके तपगच्छ वालों से यह पूछते हैं कि नरक से निकलकर श्रीतीर्थंकर महाराज अपनी माता की कुक्षि

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

में आते हैं उसको तपगच्छ वाले आश्चर्य रूप गर्भापहार की तरह नीचगोत्रविपाकरूप मानते हैं या उच्चगोत्र कर्मविपाकोदयरूप ?

और देवानंदा ब्राह्मणी की कुक्षि में श्रीवीरप्रभु उत्पन्न हुए वह भी आश्चर्यरूप है उसको आश्चर्यरूप गर्भापहार की तरह तपगच्छ वालों ने अत्यंत निंदनीयरूप अकल्याणकरूप नहीं मानकर कल्याणकरूप किस तरह मान लिया ? और श्रीवीर तीर्थंकर को कैवल्य ज्ञान होने पर प्रथमदेशना निष्फल गई वह भी आश्चर्यरूप है इसलिये उस देशना को आश्चर्यरूप गर्भापहार की तरह तपगच्छ वाले क्या अत्यंत निंदनीय रूप मानते हैं ?

तथा मूल विमान में बैठ कर सूर्यचन्द्र यह दोनों इन्द्र श्री वीर प्रभु को वंदना करने को आये यह भी आश्चर्यरूप है उसको अश्चर्यरूप गर्भापहार की तरह तपगच्छ वाले क्या अत्यंत निंदनीयरूप मानते हैं ?

और एक समय में श्रीऋषभदेव आदि १०८ उत्कृष्ट अवगाहना वाले सिद्ध हुए हैं वह भी आश्चर्यरूप माना है और इसी प्रकार कुंभराजा की पुत्री माता प्रभावती रानी की कुक्षि से मल्लीकुमारी तीर्थंकरी हुई यह भी महाआश्चर्यरूप है, परन्तु इन आश्चर्यों को तपगच्छ के उक्त उपाध्याय महाराजों ने आश्चर्यरूप गर्भापहार की तरह अत्यंत निंदनीयरूप अकल्याणकरूप न मानकर जैसा कल्याणकरूप ही माना है वैसा ही आश्चर्यरूप गर्भापहारद्वारा माता श्रीत्रिशलारानी की कुक्षि में श्रीवीर प्रभु का आना कल्याणकरूप मानना न्यायतः युक्तियुक्त है। तथापि तपगच्छ के उक्त उपाध्यायों ने अपने मनसे ही नीचगोत्रविपाकरूप, अत्यंत निंदनीयरूप, अकल्याणकरूप

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

मानना बतलाया है वह प्रत्यक्ष आगम-विरुद्ध तथा युक्ति-रहित है या नहीं ?

२० [प्रश्न] यदि तपगच्छवाले कहें कि सब तीर्थंकरों के पाँच पाँच कल्याणक जैसे मानते हैं वैसे श्रीवीर तीर्थंकर के भी पांच कल्याणक मानते हैं, इसलिये गर्भापहार के द्वारा त्रिशला माता की कुक्षि में जो श्रीवीर प्रभु आये उसको कल्याणकरूप हम लोग किस तरह मानेंगे, तो हम यह कहते हैं कि सब तीर्थंकर अपनी अपनी माता की कुक्षि में आये हैं उसको जैसा कल्याणकरूप मानते हैं उसी तरह श्रीवीर तीर्थंकर त्रिशला माता की कुक्षि में गर्भपने से आये हैं उसको कल्याणक रूप मानना न्यायतः संगत है, तथापि आपके उक्त उपाध्यायों ने दुराग्रह से नीचगोत्रविपाकरूप, अत्यंत-निंदनीयरूप, अकल्याणकरूप किस तरह मानना बताया है ? उस विषय में आपको सिद्धांतों के प्रमाण बतलाने उचित है । अन्यथा श्रीसमवायांगसूत्र में तथा नवांगसूत्रटीकाकार खरतरगच्छनायक श्रीमत् अभयदेवसूरिजी महाराज कृत समवायांगसूत्र की टीका में लिखा है कि—

सूत्र पाठ ।

समणे भगवं महावीरे तित्थगर भवग्गहणाओ छट्ठे पोट्टिलभवग्गहणे एगं वासकोडिं सामन्नपरियागं पाउणित्ता इत्यादि ।

टीका पाठ ।

किल भगवान पोटिलाभिधानो राजपुत्रो बभूव तत्र च वर्षत्वकोटिप्रव्रज्यां पालितवान् इत्येको भवः १ ततो देवोऽभूदिति द्वितीय भवः २ ततो नंदाभिधानो राजसूनुः छत्रानगर्यां

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जज्ञे इति तृतीय भवः ३ तत्र भवे वर्षलक्षं सर्वदा मासक्षपणेन तपस्तप्त्वा दशमे देवलोके पुष्पोत्तर प्रवर पुंडरीकाभिधाने देवोऽभूदिति चतुर्थ भवः ४ ततो ब्राह्मणकुंडग्रामे ऋषभदत्तस्य ब्राह्मणस्य भार्यायाः देवानंदाऽभिधानायाः कुक्षावुत्पन्न इति पंचम भवः ५ तत्र त्र्यशीतितमे दिवसे क्षत्रियकुंडग्राम नगरे सिद्धार्थ महाराजस्य त्रिशलाभिधानभार्यायाः कुक्षाविन्द्रवचनानुकारिणा हरिणेगमेषिणा नाम्ना देवेन संहृतः तीर्थकरतया जज्ञे इति षष्ठभवः ६ उक्त भवग्रहणं विना नाऽन्यत् षष्ठभवग्रहणं श्रयते भगवतः इति देवभवग्रहणतया व्याख्यातं इति।

अर्थ—देखिये इन उक्त दोनों पाठों में श्रीगणधर महाराज तथा नवांगसूत्रटीकाकार श्रीअभयदेवसूरिजी महाराज ने श्रमण भगवान् महावीर प्रभु तीर्थंकर भव ग्रहण करने के पहिले छट्ठें भव में पोट्टिल नाम के राजपुत्र थे, अथवा पोटिल भव से पाँचवें भव में देवानंदा ब्राह्मणी की कुक्षि में उत्पन्न हुए और छट्ठें भव में तीर्थंकर भव से त्रिशलारानी की कुक्षि से तीर्थंकर हुए लिखे हैं, याने पोटिल भव १ देवभव २ नंद नामक भव ३ देवभव ४ देवानंदा ब्राह्मणी पुत्र भव, अथवा देवानंदा की कुक्षि में उत्पत्तिरूपभव ५ त्रिशला रानी के पुत्र श्रीवीर तीर्थंकर हुए। यह छठवाँ भव है। इन उक्त ६ भवों का ग्रहण किये विना अन्य छठवां भव भगवान् ने ग्रहण किया, सुनने में नहीं आता है। इस लिये छठवाँ तीर्थंकर भव ग्रहणता से त्रिशलामाता की कुक्षि में भगवान् आये, सो कल्याणक रूप ही है। तुम लोग शास्त्रकारों की अपेक्षा को न समझ कर एकांत आग्रह से उसको नीचगोत्रविपाकरूप अकल्याणकरूप अत्यंतनिंदनीयरूप कहते हो सो यह सूत्रविरुद्ध महामिथ्या नवीन प्ररूपणा है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

क्योंकि इस प्रकार श्रीपरमात्मा के अवतार की निंदा मिथ्यात्वि लोग भी नहीं करते हैं वास्ते उपर्युक्त २० प्रश्नों के अलग अलग २० उत्तर तपगच्छ के श्रीआनंदसागार जी प्रकाशित करें इत्यलंविस्तरेण ।

---

* दूसरा प्रश्न *

तपगच्छ के श्रीआनंदसागरजी ने स्वप्रतिज्ञापत्र में लिखा है कि—"अपर्वस्वपि पोषधः प्रतिषेध्यो न वा ?" अर्थात् शास्त्रकार महाराजों ने अपर्व दिनों में पोषध व्रत प्रतिषेध योग्य लिखा है या नहीं ?

[उत्तर] दो पूनम या दो अमावस होने पर तपगच्छवाले सूर्योदययुक्त चतुर्दशी पर्वतिथि को झूठी कल्पना से दूसरी तेरस मानकर सावद्यकार्य नहीं वर्जन करके विशेष अलाभ के लिये पापकृत्यों से उस १४ पर्वतिथि को विराधते हैं और उस १४ पर्वतिथि में अविधि समझ कर पौषधोपवास-सहित पाक्षिक या चातुर्मासिक प्रतिक्रमण आदि धर्मकृत्य करने नहीं मान कर दूसरे गच्छवालों को प्रतिषेध (निषेध) करते हैं, इसी तरह कल्याणक आदि पर्वतिथियों की वृद्धि होने पर सूर्योदय युक्त ६० घड़ी की पहिली पर्वतिथियों में पौषध उपवास आदि धर्मकृत्य करने तपगच्छवाले निषेधते हैं और अनेक प्रकार के पापकृत्य करते हैं, सो तो आनंदसागरजी को मालूम नहीं हैं और शास्त्रसंमत खरतरगच्छवालों से शास्त्रार्थ करने को तैयार हुए हैं, अस्तु श्रावक की यथाशक्ति के अनुसार दो चतुर्दशी दो अष्टमी एक अमावास्या एक पूर्णिमा, इन ६ पर्वतिथियों में

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

तथा उपधान तप के दिनों में एवं पर्युषण तथा चौवीश तीर्थंकरों के १२१ कल्याणक संबंधी अनेक पर्वतिथियों में पौषध उपवास व्रत करना शास्त्रपाठों से खरतरगच्छवाले बतलाते हैं उन पर्वतिथियों में पौषध करने में विशेष लाभ को वा पौषध करना तपगच्छवाले त्याग कर अर्थात् शास्त्रोक्त पौषध नियम के उक्त पर्वतिथियों में पौषध नहीं करके अनियम से अपर्व तिथियों में पौषध करने का आग्रह करते हैं, अथवा पर्व अपर्व-रूप प्रतिदिवसों में पौषध आचरण करना मानते हैं, परंतु श्रीगणधरादि महाराज विरचित सूत्र, टीका चूर्णि आदि अनेक ग्रंथों के अभिप्राय ज्ञाता, १४४४ ग्रंथकर्त्ता बहुश्रुत श्रीमान् हरिभद्रसूरिजी महाराज ने आवश्यकसूत्र की बृहट्टीका में पोषधोपवास तथा अतिथि-संविभाग यह दोनों व्रत प्रतिनियत दिनों में [अनुष्ठेय] करने योग्य हैं किंतु प्रतिदिवस आचरण करने योग्य नहीं है, ऐसा निषेध लिखा है। तत्सम्बन्धीपाठ। यथा—

चत्वारीति संख्या शिक्षापदव्रतानि शिक्षा अभ्यासः तस्याः पदानि स्थानानि व्रतानि शिक्षापदव्रतानि इत्वरा-णीति तत्र प्रतिदिवसानुष्ठेये सामायिकदेशावगाशिके पुनः पुनरुच्चार्ये इति भावना, पोषधोपवासाऽतिथिसंविभागौ तु प्रतिनियतदिवसाऽनुष्ठेयौ न प्रतिदिवसाऽऽचरणीयौ इति।

अर्थ—श्रावकधर्म में पाँच अणुव्रत तीन गुणव्रत यह यावत् कथिक अर्थात् एक वार ग्रहण किये हुए यावज्जीवन पर्यंत भावना करने योग्य हैं और चार जो शिक्षाव्रत हैं वे इत्वर याने अल्पकालीन हैं, उनमें सामयिक तथा देशावकाशिक यह दोनों शिक्षाव्रत प्रतिदिवस अनुष्ठेय हैं याने पुनः पुनः उच्चारणीय हैं। और पोषध-उपवास अतिथि-संविभाग यह दोनों

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जो व्रत हैं सो प्रतिनियत दिनों में [अनुष्ठेय] करने योग्य हैं, किंतु प्रतिदिवस आचरण करने योग्य नहीं हैं, यह निषेध लिखा है। इसी तरह श्रीहरिभद्रसूरिजी महाराज नें श्रावकप्रज्ञप्तिवृत्ति में भी लिखा है। तत्संबंधी पाठ। यथा—

तत्र प्रतिदिवसानुष्ठेये सामायिकदेशावगासिके पुनः पुनरुच्चार्ये इति भावना पोषधोपवासाऽतिथिसंविभागौ तु प्रतिनियत दिवसाऽनुष्ठेयौ न प्रतिदिवसाचरणीयाविति।

अर्थ—श्रावक धर्म के ४ शिक्षाव्रतों में सामायिक और देशावगासिक, ये दोनों व्रत प्रतिदिवस अनुष्ठेय हैं अर्थात् पुनः पुनः उच्चरणे योग्य हैं—ऐसा समझना, और पोषध-उपवास अतिथिसंविभाग, ये दोनों व्रत प्रतिनियत दिनों में अनुष्ठेय हैं, किंतु प्रतिदिवसों में आचरण करने योग्य नहीं हैं। ऐसा निषेध दिखलाया है। श्रीपंचाशकचूर्णि में भी पाठ। यथा।

तत्थ पइदिवसाणुट्ठेयाणि सामाइय-देसावगासियाइं पुणो२ उच्चारिज्झंतित्ति भणियं होइ पोसहोववासा-तिहिसंविभागा-पुण पइनिययदिवसाणुट्ठेया।

अर्थ—श्रावक धर्म के चार शिक्षा व्रतों में, सामायिक १, देशावकाशिक २, ये दोनों व्रत प्रतिदिवस [अनुष्ठेय] करने योग्य हैं, याने पुनः पुनः उच्चरणे में आते हैं, ऐसा समझना और पोषधोपवास १, अतिथिसंविभाग २, ये दोनों व्रत प्रतिनियत दिवसों में [अणुट्ठेया] करने योग्य हैं।

श्रीतत्त्वार्थसूत्र की टीका में भी पाठ। यथा—

व्रती अगारी अनगारश्च अणुव्रतोऽगारी दिग्देशाऽनर्थदंडविरति-सामायिक-पौषधोपवासोपभोगपरिभोगाऽतिथिसंवि-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भागव्रतसंपन्नश्च शीलसंपन्नश्च कृतद्वंद्वादिगादयस्तैः संपन्नः समृद्धः संयुक्तः चशब्दः समुच्चयवचनः प्रतिपन्नाणुव्रतस्याऽगारिणस्तेषामेवाणुव्रतानां दार्ढ्यापादनाय शीलोपदेशः शीलं च गुणशिक्षाव्रतमयं तत्र गुणव्रतानि त्रीणि दिगुपभोगपरिभोगाऽनर्थदंडविरतिसंज्ञान्यऽणुव्रतानां भावनाभूतानि तथा अणुव्रतान्यपि सकृद्गृहीतानि यावज्जीवं भावनीयानि शिक्षाव्रतपदानि सामायिक १ देशावकाशिक २ पौषधा ३ ऽतिथिसंविभागाख्यानि ४ चत्वारि तत्र प्रतिदिवसाऽनुष्ठेये द्वे सामायिक १ देशावकाशिके २ पुनः पुनरुच्चार्येते इतियावत्। पौषधा १ ऽतिथिसंविभागौ २ च प्रतिनियत दिवसानुष्ठेयौ न प्रतिदिवसाचरणीयौ इति।

भावार्थ—व्रती साधु और श्रावक है, अणुव्रती श्रावक दिग्व्रतादि संयुक्त होता है, प्रतिपन्न अणुव्रत श्रावक के उन्हीं पाँच अणुव्रतों की दृढ़ता के लिये शीलोपदेश है। यहाँ पर शील जो है सो गुण और शिक्षा व्रतमय है। उनमें श्रावक के गुणव्रत तीन हैं वो दिग्व्रत १, उपभोगपरिभोग २, अनर्थदंडविरति ३ नाम के हैं। यह पाँच अणुव्रत के भावनाभूत है तथा पाँच अणुव्रत भी श्रावक ने एक वार ग्रहण किये यावज्जीवन पर्यंत भावने योग्य हैं और श्रावक के शिक्षा व्रत सामायिक १, देशावकाशिक २, पौषध ३, अतिथिसंविभाग ४ नाम के चार हैं। उनमें प्रतिदिवस करने योग्य दो हैं--सामायिक १ और देशावकाशिक २। यह पुनः पुनः उच्चरणे के हैं, ऐसा जानना। पौषध १ और अतिथिसंविभाग २ यह दो व्रत प्रतिनियतदिवसों में करने योग्य है। प्रतिदिवस आचरणे योग्य नहीं है, ऐसा निषेध बतलाया है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

इसी तरह श्रीपंचाशकवृत्ति में भी पाठ। यथा—

तत्र प्रतिदिवसाऽनुष्ठेये सामायिक १ देशावकाशिके २ पुनः पुनरुच्चार्येते इतिभावना। पौषधोपवासा १ ऽतिथिसंविभागौ तु प्रतिनियतदिवसाऽनुष्ठेयौ न प्रतिदिवसाचरणीयाविति इतिशब्दः प्रस्तुतार्थ परिसमाप्त्यर्थः इति—

अर्थ—श्रावक को सामायिक १, देशावकाशिक २, यह दोनों व्रत प्रतिदिवस (अनुष्ठेय) करने योग्य है याने पुनः पुनः उच्चरणे में आते हैं, ऐसा समझना। और पौषधउपवास १ अतिथिसंविभाग २ यह दोनों व्रत प्रतिनियत पर्वरूप दिवसों में (अनुष्ठेय) करने योग्य है, किंतु प्रतिदिवसों में आचरण करने योग्य नहीं है। ऐसे प्रकट निषेध अक्षर लिखे हैं। वास्ते शास्त्र पाठों की आज्ञा के अनुसार प्रतिनियत पर्वरूप दिवसों में पौषध करने का विशेष लाभ को त्यागकर अनियम से अपर्वरूप दिवसों में पौषध करने का आग्रह करना ठीक नहीं। क्योंकि उपर्युक्त पाठों में पौषध प्रतिदिवसों में आचरण करने योग्य नहीं है, ऐसा लिखा हैं तथापि तपगच्छवाले पर्व अपर्व रूप प्रतिदिवसों में पौषध करना बतलाते हैं तो अपने कथनानुसार तथा शास्त्रपाठों की आज्ञा के अनुसार प्रतिपदा आदि चौवीश तीर्थकरों के कल्याणक आदि की संबंधवाली सर्व पर्वतिथियों में पौषध करके अपर्व तिथियों में भी पौषध करे तो विशेष लाभ समझेंगे अन्यथा चौवीश तीर्थकरों के कल्याणक आदि पर्वतिथियों में पौषध नहीं करके अपर्वतिथियों में पौषध करना और विशेष लाभ दिखलाना यह तो शास्त्रआज्ञा तथा अपने माने हुए पर्व पौषध मंतव्य के प्रतिकूल होने से ठीक नहीं है और चतुर्दशी आदि पर्वतिथि की वृद्धि होने पर प्रथम पर्वतिथि में पौषधादि

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

धर्मकृत्य नहीं करके उन पर्वतिथियों को पापकृत्यों से विराधना तथा उन तिथियों में पौषधादि धर्मकृत्य करने निषेधने, यह भी ठीक नहीं है और अमावस या पूनम की वृद्धि होने से चतुर्दशी पर्वतिथि में पौषधादि धर्मकृत्य नहीं करके उस १४ पर्व तिथि में पौषधादि धर्मकृत्य निषेधने और उस १४ पर्वतिथि को झूठी कल्पना से दूसरी तेरस मान कर पाप-कृत्यों से विराधना यह सर्वथा अनुचित है। क्योंकि चतुर्दशी आदि पर्वदिनों में तथा प्रतिपदा आदि कल्याणक पर्व की तिथियों में और उपधान में तथा श्रीपर्युषणापर्व में पौषध ग्रहण करना शास्त्रों में लिखा है। प्रमाण श्रीखरतरगच्छनायक श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज कृत पौषधविधि प्रकरण ग्रंथ में यथा—

चउद्दसि अट्ठमि पज्जोसवणादि पव्वदिवसेसु।
साहुसगासे पोसहसालाए घरे चेइए कुज्जा ॥ १ ॥

अर्थ—चतुर्दशी अष्टमी पूर्णिमा अमावास्या पर्युषणा आदि शब्द से कल्याणक पर्व दिवसों में साधु के पास पौषध-शाला में, घर में, चैत्य में श्रावक पौषध ग्रहण करे ॥ १ ॥

श्रीधर्मविधिप्रकरणवृत्ति में भी पाठ। यथा—

सामाइय प्पमाणं, करेइ देसावगासियं णिच्चं।
पव्वे पोसह गहणं, अतिहिविभागं च मुणि जोगे ॥

अर्थ—कामदेव श्रावक सामायिक व्रत का प्रमाण और देशावगाशिक यह दोनों व्रत नित्य करता है और पर्वदिनों में पौषध व्रत ग्रहण करे, अतिथिसंविभाग व्रत मुनि का योग होने पर करे।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

और उपधान तप वहने संबंधी पौषधविषय में तपगच्छ के श्रीरत्नशेखरसूरिजी ने श्रीआचारप्रदीप ग्रंथ में लिखा है कि--

पौषधक्रिया तु यद्यपि महानिशीथे साक्षान्नोक्ता तथा साधोर्योगेष्वतिशायिक्रियावत्त्वं सर्वप्रतीतं तथा श्राद्धानामपि उपधानेषु विलोक्यते इति ।

तथा खरतरगच्छ आदि अनेक गच्छों की समाचारी में और योगविधिप्रकरण ग्रंथों में भी लिखा है कि—

यद्यपि श्रीमहानिशीथादौ उपधाने सदा पौषधग्रहणं नोक्तं तथापि सर्वगच्छीय गीतार्थाचरणया उपधाने पौषधग्रहणं प्रमाणीकृतमस्तीति दृश्यते इति ।

अर्थ—यद्यपि श्रीमहानिशीथसूत्रादि सिद्धांतों में उपधान में सदा पौषधग्रहण करना नहीं लिखा है तथापि साधु के योग में क्रिया की तरह श्रावक के उपधान में भी पौषधग्रहण करना सर्वगच्छीय गीतार्थ आचरणा से प्रमाण किया है। ऐसा देखने में आता है।

पाठकगण ! उपधान में सदा पौषध की तरह सर्वदा काल पर्व अपर्व रूप प्रतिदिवसों में पौषधव्रत श्रावक को आचरणे में नहीं आता है, अतएव शास्त्रआज्ञा के अनुसार विशेष लाभ के लिये चतुदशी आदि पर्वदिनों में तथा श्रीपर्युषणपर्व में और श्रीचौवीश तीर्थंकरों के कल्याणक संबंधी प्रतिपदा आदि अनेक पर्वतिथियों में पौषधउपवास व्रत करना उचित है किंतु उन पर्वतिथियों में नहीं करना और अपर्वतिथियों में करने का

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

आग्रह दिखलाना यह उचित नहीं है । क्योंकि श्रीनवपदप्रकरण टीका में पौषधउपवास व्रत करने के लिये लिखा है कि—

पोसह उववासो पुण्ण अट्ठमि चउद्दसी चवणजम्मदीख्खा दिणे नाणे निव्वाणे चाउम्मासअट्ठाहिपज्जुसणे ॥१॥

अर्थ—पौषध उपवासव्रत अष्टमी, चतुर्दशी, पूर्णिमा, अमावास्या पर्वदिनों में और श्रीचौवीश तीर्थंकर महाराजों के चवन, जन्म, दीक्षा, ज्ञान, मोक्ष कल्याणक संबंधी तिथियों में तथा चतुर्मासी अट्ठाहि पर्युषणपर्व दिनों में आचरण करने योग्य है । श्रीविचारसार ग्रंथ में भी पाठ । यथा—

पौषधं पर्वदिनानुष्ठानमेवेति श्रुतधरवचनानुसारेण अष्टमी-चतुर्दशीपूर्णिमाऽमावास्या-कल्याणक-पर्युषणापर्व-दिवसेष्वेव पौषधं सामायिकयुक्तं कार्यमिति ।

अर्थ—पौषध व्रत पर्वदिन का अनुष्ठान है, यह कथन श्रीश्रुतधर महाराजों के वचनानुसार है । इसलिये अष्टमी, चतुर्दशी, पूर्णिमा, अमावास्या श्रीतीर्थंकर महाराजों के कल्याणक पर्युषणा पर्व संबंधी तिथियों में सामायिक युक्त पौषध उपवास व्रत करने का है । श्रीतत्त्वार्थ भाष्य में भी पाठ । यथा—

पौषधः पर्वेत्यऽनर्थांतरं सोऽष्टमीं चतुर्दशीं पंचदशीमऽन्यतमां वा तिथिमऽभिगृह्य चतुर्थाद्युपवासिना इत्यादि ।

श्रीतत्त्वार्थभाष्य की टीका संबंधी पाठ । यथा—

पौषधः पर्वेति नाऽर्थांतरं सः पौषध अष्टमीं चतुर्दशीं पंचदशीमिति पूर्णिमां अमावास्यां च तिथिमऽन्यतमां वेति पर्युषणा-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

कल्याणकसंबंधिनीमऽन्यतिथिमऽभिगृह्य चतुर्थाद्युपवासिना श्राद्धेन इत्यादि ।

अर्थ—पौषध और पर्व, यह दोनों शब्द समान अर्थ वाले हैं। वह पौषध अष्टमी, चतुर्दशी, पूर्णिमा, अमावास्या रूप पर्वतिथि को अथवा श्रीपर्युषणपर्व तथा कल्याणक संबंधी प्रतिपदा आदि अन्यतम तिथि को ग्रहण करके चतुर्थादि उपवासवाला श्रावक यथोक्त रीति से धर्मानुष्ठान करें।

दूसरी श्रीतत्वार्थभाष्य की वृत्ति उसका पाठ। यथा—

सोऽष्टमीमित्यादि स पौषधोपवास उभयोः पक्षयोरष्टम्यादितिथिमऽभिगृह्य निश्चित्यबुद्ध्या ऽन्यतमां वेति प्रतिपदादि तिथिमऽनेनचाऽन्यासु तिथिषु अनियमं दर्शयति नाऽवश्यतयाऽन्यासु कर्त्तव्यः अष्टम्यादिषु तु नियमेन कार्यश्चतुर्थाद्युपवासिनेति कर्तृलक्षणा तृतीया इति ।

अर्थ—वह पौषध उपवास दोनों पक्ष की अष्टमी आदि तिथि को अथवा अन्यतमां याने प्रतिपदा आदि कल्याणक संबंधी या पर्युषणपर्व संबंधी अन्य तिथि को ग्रहण करके श्रावक धर्म तत्पर हो यह अभिप्राय या परमार्थ बताए हुए सर्व पाठों के साथ अविसंवादपणे से संगत है किंतु वृत्तिकर्त्ता ने अष्टमी आदि तिथियों में नियम से पौषध करना और प्रतिपदादि अन्य तिथियों में अनियम याने अवश्य करके अन्य तिथियों में पौषध उपवास व्रत करने योग्य नहीं है, ऐसा लिखा है। इससे भी मालूम होता है कि प्रति दिवसों में पौषध उपवास व्रत श्रावक को आचरणे योग्य नहीं है किंतु अष्टमी चतुर्दशी आदि और कल्याणक आदि प्रतिनियत दिवसों में पौषध करने योग्य है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

प्रमाण श्रीशीलांगाचार्य महाराज कृत श्रीसूयगड़ांगसूत्र की टीका के दूसरे श्रुतस्कंध संबंधी सातवें अध्ययन में सूत्र तथा टीका पाठ। यथा—

तत्थणं नालंदाए बाहिरिआए लेपनामगाहावई होत्था जाव अहिगयजीवाऽजीवे जाव चउद्दसऽट्ठमुद्दिट्ठपुण्णमासीणी-सु पड़िपुण्णं पोसहमणुपालेमाणे विहरति (टीका) चतुर्द-श्यऽष्टम्यादितिथिषु उद्दिष्टासु महाकल्याणकसंबंधितया पुण्य-तिथित्वेन प्रख्यातासु। तथा पौर्णमासीषु च तिसृष्वऽपि चतु-र्मासिकतिथिषु इत्यर्थः एवं भूतेषु धर्मदिवसेषु सुष्ठु अतिश-येन प्रतिपूर्णो यः पौषधो व्रताऽभिग्रहविशेषस्तत्र प्रतिपूर्णं आहारशरीरसत्काराऽब्रह्मचर्याऽव्यापाररूपं पौषधमऽनुपालयन् श्रावकधर्ममाऽऽचरति इति——

अर्थ—राजगृही नगरी में नालंदा पहाड़ा के बाहर लेपनाम का गाथापति था। जाने हैं जीव अजीव पदार्थ जिसने ऐसा वह श्रावक जाव चतुर्दशी अष्टमी आदि पर्वतिथियों में और महा-कल्याणक संबंधी पुण्य तिथियों में तथा चातुर्मासिक तिथियों में अर्थात् इस प्रकार के धर्म के दिनों में अतिशय करके प्रतिपूर्ण जो पौषध व्रत उसमें आहार का त्याग १ शरीर सत्कार का त्याग २ अब्रह्मचर्य का त्याग ३ व्यापार त्याग ४ रूप प्रतिपूर्ण पौषध व्रत को पालता हुआ श्रावकधर्म को आचरता है।

श्रीसूयगड़ांगसूत्र के १३ वें अध्ययन में भी पाठ। यथा—

अत्थेगइया समणोवासगा भवंति तेसिं च एवं वुत्त-पुव्वं भवइ नो खलु वयं संचाएमो मुंडे भवित्ता अगाराओ

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अणगारिअं पव्वइत्तए वयंचणं चाउद्दसऽट्ठमुद्दिट्ठ-पुण्णमासीणीसु पडिपुण्णं पोसहं सम्ममऽणुपालेमाणा विहरिस्सामो ।

अर्थ—ऐसे कई श्रावक होते हैं कि जिन्होंने प्रथम ऐसा कहा है कि हम घर से निकल कर मुंड होके साधुपना स्वीकार करने को समर्थ नहीं है, इस लिये हम लोग चतुर्दशी, अष्टमी, (उद्दिठ) कल्याणक तिथियाँ और पूर्णिमा, अमावास्या इन पर्वदिनों में परिपूर्ण पौषधव्रत सम्यक् प्रकार से अनुपालन करते हुए वर्त्तेंगे ।

एवं श्रीविपाकसूत्र आदि ग्रंथों में सुबाहु कुमार आदि ने अष्टम भक्त में याने तीसरे उपवास में चतुर्दशी अष्टमी आदि पर्वतिथियों में पौषध किया लिखा है । और धारणी माता को मेघवृष्टि रूप अकाल दोहला पूर्ण करने के लिये अभयकुमार ने तथा द्रौपदी को हरने के लिये पद्मनाभ राजा ने और द्रौपदी को लाने के लिये श्रीकृष्ण वासुदेव ने देवता को आराधने के निमित्त पौषधशाला में तीन उपवास किये हैं, अतएव व्रत के निमित्त ये तीन पौषध नहीं हैं और श्रीविजयराजा ने भी विजली-पड़ने रूप उपद्रव टालने के निमित्त सातवें दिन मध्यान्ह समय नमोअरिहंताणं कहकर पौषध पाला है । वह व्रतरूप पौषध नहीं था । व्रतरूप पौषध तो कल्याणक पर्युषणापर्व अष्टमी आदि पर्वतिथियों में करने शास्त्रकारों ने लिखे हैं ।

प्रमाण श्रीदेवेन्द्रसूरिजी विरचित धर्मरत्नप्रकरण की बृहद्वृत्ति में पाठ । यथा—

पोषं पुष्टिं क्रमाद्धर्मस्य धत्ते करोतीति पोषधः अष्टम्यादि-पर्वदिनाऽनुष्ठेयो व्रतविशेषः ।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अर्थ—धर्म की पुष्टि करता है इसलिये पोषध कहलाता है, याने अष्टमी आदि पर्व दिनों में [अनुष्ठेय] करने योग्य व्रत विशेष को पोषध कहते हैं।

नवांगसूत्र टीकाकार श्रीअभयदेवसूरिजी महाराज विरचित उपाशकदशासूत्र की टीका में पाठ। यथा—

तयाणं पोसहोववासस्स पंच अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा । इह पोषधशब्दो ऽष्टम्यादिपर्वसु रूढस्तत्र पोषधे उपवासः पोषधोपवासः स च आहारादि विषय भेदात् चतुर्विध इति ।

अर्थ—पोषधोपवास व्रत के ५ अतिचार जानने योग्य हैं, आचरण करने योग्य नहीं । टीका पाठ में श्रीअभयदेव सूरिजी महाराज खुलासा करके लिखते हैं कि यहाँ पर याने पौषध व्रत के अधिकार में पोषध शब्द अष्टमी आदि पर्वतिथियों में रूढ़ (प्रवर्तता) है। उस पोषध में उपवास किया जाता है, इसलिये पौषधोपवास कहने में आता है और वह पोषधोपवास व्रत आहारादि विषय भेद से याने आहार १ शरीर सत्कार २ कुशील ३ क्रियास्थानादि का त्याग ४ करने से, चार प्रकार का है।

श्रीहेमचंद्राचार्य महाराज विरचित योगशास्त्र में तथा अन्य ग्रंथों में पाठ। यथा—

चतुः पर्व्यां चतुर्थादि कुव्यापार निषेधनं ॥
ब्रह्मचर्यं क्रियास्थानादित्यागः पौषधं व्रतं ॥ १ ॥
चतुर्विधेन शुद्धेन पोषधेन समन्वितं ॥
तत् पर्वदिवसे कृत्यमऽतिचारविवर्जितं ॥ १ ॥

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

व्याख्या—पर्वदिवसे अष्टमी-चतुर्दशी-पूर्णिमाऽमावास्या-पर्युषणादिपुण्यवासरे तत्सामायिकं कृत्यं कार्यं कीदृग् समन्वितं केन पौषधेन इत्यादि ।

अर्थ—अष्टमी चतुर्दशी पूर्णिमा अमावास्या रूप चतुःपर्वी दिनों में तथा पर्युषण कल्याणक संबंधी पवित्र दिनों में चतुर्थादि तप करना, कुव्यापार निषेध, ब्रह्मचर्य का पालन, और क्रिया स्थानादि का त्यागरूप पौषधव्रत सामायिक युक्त अतिचार रहित श्रावक को करने का है। प्रिय पाठकगण! श्रीगणधर आदि महाराजों के रचित सूत्र, टीका, चूर्णि, प्रकरण आदि उपर्युक्त अनेक सिद्धांतपाठों के अनुसार पौषध मंतव्य का निरूपण हमने लिखा है। फिर श्रीतीर्थंकर महाराजों ने श्रावक के पौषध विषय में जो प्ररूपणा की हो सो प्रमाण है।

श्रीआत्मप्रबोधग्रन्थ में भी पौषधविषय में प्रश्नोत्तर संबंधी पाठ। यथा—

ननु श्रीपर्वतिथिष्वेव पौषधं तपः कुर्यान्नाऽन्यदा इति चेद,ऽत्राऽऽहुः केचित् । श्रावकेण हि पौषधतपः सर्वास्वऽपि तिथिषु कर्त्तव्यं परं यद्यऽसौ तथा कर्त्तुं न शक्नोति तदा पर्वतिथिषु नियमात्करोतीत्यतः पर्वग्रहणं बोध्यमिति । आवश्यक वृत्त्यादौ तु स्पष्टमेव पौषधकर्त्तव्यतायाः प्रतिदिवसं निषेधः प्रोक्तोऽस्ति इह तत्त्वं तु सर्वविद्वेद्यं इति ।

अर्थ—श्री पर्वतिथियों में ही पौषध तप करना अन्य तिथि में नहीं, तो इस प्रश्न के विषय में (आहुः केचित्) कोई गच्छवादी कहता है कि श्रावक को निश्चय पौषधतप सभी तिथियों में

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

करने योग्य हैं। परंतु जब वह श्रावक सर्वतिथियों में पौषधतप करणे को समर्थ नहीं है तब पर्व तिथियों में नियम से पौषधतप करे। इसलिये पर्वतिथि को ग्रहण किया जानना, ऐसा कोई कहता हैं। परंतु श्रीआवश्यक टीका आदि ग्रन्थों में स्पष्ट ही श्रावक को प्रतिदिवस पौषध व्रत करने योग्य नहीं है, ऐसा निषेध लिखा है। इस विषय में तत्त्वतो केवली जाने—

पाठकगण ! खरतरगच्छ वाले कहते हैं कि उपर्युक्त श्री-आवश्यक टीका आदि ग्रंथों के (पौषधोपवासाऽतिथिसंविभागौ-प्रातिनियतदिवसाऽनुष्ठेयौ) इस वाक्य से पौषध उपवास व्रत अष्टमी आदि कल्याणक पर्युषण आदि प्रतिनियत पर्व दिवसों में (अनुष्ठेय) करने योग्य हैं, किंतु (न प्रतिदिवसाचरणीयौ) इस वाक्य से श्रावक को प्रतिदिवसों में पौषध उपवास व्रत आचरण करने योग्य नहीं है, ऐसा निषेध श्रीहरिभद्रसूरिजी ने लिखा है। और तपगच्छवाले पर्व अपर्व रूप प्रतिदिवसों में श्रावक को पौषध उपवास व्रत सिद्ध करने के आग्रह से लिखते हैं कि—(न च क्वाप्याऽऽगमे तन्निषेधः श्रूयते) कोई भी आगम में प्रतिदिवसों में श्रावक को पौषध उपवास व्रत आचरण करने योग्य नहीं है, ऐसा निषेध नहीं सुनते हैं। और भी तपगच्छ वाले लिखते हैं कि—

श्रीहरिभद्रसूरिकताऽऽवश्यकबृहद्वृत्तिश्रावकप्रज्ञप्तिवृत्त्यादौ पौषधोपवासाऽतिथिसंविभागौ तु प्रतिनियतदिवसाऽनुष्ठेयौ न प्रतिदिवसाचरणीयौ—नहीदं वचनं पर्वाऽन्यदिनेषु पौषध-निषेधपरं किंतु पर्वसु पौषधकरणनियमपरं।

अर्थात्—श्रीहरिभद्रसूरिजी कृत आवश्यकसूत्र की बड़ी टीका

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

में और श्रावकप्रज्ञप्ति की टीका आदि ग्रंथों में पौषधउपवास, अतिथिसंविभाग, ये दोनों व्रत श्रावक को प्रतिनियत दिवसों में (अनुष्ठेय) करने योग्य हैं, किंतु प्रतिदिवसों में पौषध उपवास, अतिथिसंविभाग व्रत आचरण करने योग्य नहीं हैं। यह वचन पर्व से अन्य दिनों में पौषध का निषेध नहीं बतलाता है किंतु पर्वदिनों में पौषध करने का नियम दिखलाता है। याने तपगच्छ वाले (प्रतिनियत दिवसाऽनुष्ठेय) इस वाक्य का अर्थ पर्वदिनों में पौषध करने का नियम, यह अर्थ तो वाक्यानुकूल बतलाते हैं; किंतु (न प्रतिदिवसाचरणीय) यह वचन पर्व से अन्य दिनों में पौषध का निषेध नहीं दिखलाता है, यह अर्थ तपगच्छवाले करते हैं, सो उक्त वाक्य के अनुकूल नहीं है। याने उक्त वाक्य-विरुद्ध इस झूठे अर्थ से तपगच्छवाले पर्व-अपर्व-रूप प्रतिदिवसों में पौषध उपवास व्रत करने का अपने पक्ष को सिद्ध करते हैं। परंतु इस तरह सिद्धांतों के वचनों का झूठा अर्थ करने में महा-दोषापत्ति आती है। क्योंकि श्रीतीर्थंकर गणधर महाराजों की प्ररूपणा के अनुकूल श्रीहरिभद्रसूरिजी आदि महाराजों ने उप-र्युक्त पाठों से श्रावक की यथाशक्ति नियमानुसार पौषध उपवास व्रत अष्टमी, चतुर्दशी, पूर्णिमा, अमावास्या, कल्याणक तिथियाँ, पर्युषणा पर्व आदि प्रतिनियत पर्वदिवसों में (अनुष्ठेय) करने योग्य लिखा है; और प्रतिदिवसों में पौषध उपवास व्रत श्रावक को आचरण करने योग्य नहीं है, ऐसा निषेध स्पष्ट ही लिख दिखलाया है। इस विषय में तपगच्छवाले अपने पक्ष की सिद्धि के लिये चाहे जितने कुतर्क और झूठे अर्थ करें परन्तु उक्त सूरिजी के यथोचित वचनों में कुछ भी दोषापत्ति नहीं आ सकती है। क्योंकि तपगच्छवाले लिखते हैं कि—

आवश्यकवृत्त्यादौ श्राद्धपंचमप्रतिमाऽधिकारे दिवैव

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

ब्रह्मचारी न तु रात्रौ इति वचनं दिवसे ब्रह्मचर्ये नियमार्थं न तु रात्रौ ब्रह्मनिषेधार्थं अन्यथा पंचमप्रतिमाऽऽराधकेन श्राद्धेन रात्रावऽब्रह्मचारिणैव भाव्यमिति पापोपदेश एव दत्तः स्यात् रात्रौ ब्रह्मपालने प्रतिमाऽतिचारश्च प्रसज्येत इत्यादि ।

अर्थ—आवश्यक वृत्यादि में श्रावक की पंचम प्रतिमा के अधिकार में श्रावक दिवस में ही ब्रह्मचारी किंतु रात्रि में वह श्रावक ब्रह्मचारी नहीं, यह वचन दिवस में ब्रह्मचर्य में नियमार्थ है, किंतु रात्रि में ब्रह्मचर्य का निषेधार्थ नहीं है। अन्यथा पंचम प्रतिमा आराधक श्रावक(दिवैव ब्रह्मचारी न तु रात्रौ)दिवस में ही ब्रह्मचारी किंतु रात्रि में ब्रह्मचारी नहीं, ऐसा शास्त्रकारों का पाप का ही उपदेश दिया सिद्ध होगा और रात्रि में ब्रह्मचर्य पालने में प्रतिमा को अतिचार लगेगा। इत्यादि दोषापत्ति शास्त्रकारों के वचनों में तपगच्छवाले प्रतिपादन करते हैं, परन्तु श्रीतीर्थंकर गणधर टीकाकार आदि महाराजों ने श्रीसमवायांग सूत्र आदि ग्रंथों में श्रावक की पंचम प्रतिमा के अधिकार में कहा है कि—

दिया बंभयारी रत्ति परिमाणकडे—दिवाब्रह्मचारी रत्तीति रात्रौ किमऽतआह परिमाणं स्त्रीणां तद्भोगानां वा प्रमाणं कृतं ।

अर्थ—दिवस में पंचम प्रतिमाधारी श्रावक ब्रह्मचारी रहे, रात्रि में वह श्रावक क्या करे? इसलिये सूत्रकार महाराज कहते हैं कि (परिमाणकडे) स्त्रियों का वा स्त्री के भोगों का प्रमाण करे। तपगच्छवालों के कहने-से शास्त्रकारों का यह पाप का ही उपदेश दिया सिद्ध नहीं हो सकता है, क्योंकि श्रीतीर्थंकर गणधर आदि महाराजों ने श्रावक के लिये यथोचित धर्मोपदेश ही दिया है। और उक्त प्रतिमाधारी श्रावक को रात्रि में ब्रह्मचर्य का निषेध

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

नहीं, इस बहाने से श्रीतीर्थंकर गणधर टीकाकार आदि महाराजों के उपर्युक्त वचनों के अर्थ को तपगच्छवाले छुपा कर दोष के भागी भले बनें, परन्तु तपगच्छवाले अपने पक्ष की सिद्धि नहीं कर सकते हैं। क्योंकि तपगच्छवालों को यह अर्थ तो मानना ही पड़ेगा कि पंचम प्रतिमाधारी श्रावक उपर्युक्त पाठों के अनुसार दिवस में ब्रह्मचारी रहे और रात्रि में वह श्रावक स्त्रियों का वा स्त्री के भोगों का प्रमाण करता है, इसीलिये वह श्रावक रात्रि में ब्रह्मचारी नहीं। और तपगच्छवालों को यह अर्थ भी मानना ही पड़ेगा कि श्रावक को पौषध उपवास व्रत और अतिथिसंविभाग व्रत उपर्युक्त पाठों के अनुसार प्रतिनियत दिवसों में (अनुष्ठेय) करने योग्य हैं, प्रतिदिवसों में आचरण करने योग्य नहीं हैं।

महाशय श्रीआनंदसागरजी को विदित करते हैं कि आपके पौषध संबंधी दूसरे प्रश्न का उत्तर उपर्युक्त सिद्धान्तपाठों के अनुसार खरतरगच्छवालों की तरफ से समझ लेना, और निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर शास्त्रपाठों से यथार्थ प्रकाशित करनेः—

१ [प्रश्न] तपगच्छवाले लिखते हैं कि—पर्वाऽन्यदिवसेष्वऽपि पौषधग्रहणे न कश्चिदऽविधिः किंतु सावद्यवर्जनादिना विशेषलाभ एवेति प्रतिपत्तव्यं। अर्थात्—पर्व से अन्य दिनों में भी पौषध ग्रहण करने में न कोई अविधि होता है किंतु सावद्यकार्य (पापकृत्य) वर्जनादि धर्मकृत्यों से विशेष लाभ ही होता है, ऐसा स्वीकार करना चाहिये। इस कथन पर तपगच्छवालों से हम यह पूछते हैं कि पौषध उपवास व्रत ग्रहण करने के लिये शास्त्रकारों ने उपर्युक्त पाठों में अष्टमी, चतुर्दशी, पूर्णिमा, अमावास्या तथा पर्युषण और चौवीस तीर्थंकरों के कल्याणक संबंधी अनेक अन्य तिथियाँ बतलाई हैं,

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

इसलिये उक्त शास्त्रों की आज्ञानुसार उन तिथियों में पौषध करने से विशेष लाभ है, सो तो उन सर्व पर्वतिथियों में पौषध ग्रहण नहीं कर सकते हो और पर्व से अन्य दिनों में पौषध ग्रहण करने में विशेष लाभ बतलाते हो; तो जब द्वितीया आदि दो पर्वतिथियाँ होती हैं तब सूर्योदययुक्त ६० घड़ी की सम्पूर्ण पहिली दूज आदि पर्वतिथियों में भी तपगच्छवाले कुशील नीलोतरी का छेदन भेदन आदि पापकृत्यों को ग्रहण करके उन पर्वतिथियों की विराधना द्वारा विशेष पाप रूपी अलाभ को क्यों स्वीकार करते हैं ? क्योंकि सूर्योदययुक्त ६० घड़ी की संपूर्ण पहिली दूज आदि पर्वतिथियों में ब्रह्मचर्य पालन, नीलोतरी का त्याग आदि धर्मकृत्य करने में न कोई अविधि होता है किंतु सावद्य कार्य (पापकृत्य) वर्जने से हजारों जीवों को धर्म का विशेष लाभ ही होगा। तपगच्छवाले इस बात को क्यों नहीं स्वीकार करते हैं ?

क्योंकि तपगच्छनायक श्रीरत्नशेखरसूरिजी ने श्राद्धविधि ग्रन्थ में लिखा है कि—

उदयंमि या तिहि, सा पमाणा इयरा उ कीरमाणाणं ।
आणाभंगणवत्था, मिच्छत्त विराहणा पावं ॥ १ ॥

अर्थ—सूर्योदययुक्त जो पर्वतिथि हो सो प्रमाण करना (मानना) उचित है, (इयरा) अन्य अपर्व तिथियाँ करने में आज्ञाभंग अवस्था तथा मिथ्यात्व और पर्वतिथि विराधने से पाप बंधन होता है।

२ [प्रश्न] दो पूर्णिमा और दो अमावास्या होने पर तपगच्छवाले सूर्योदययुक्त चतुर्दशी पर्वतिथि का निषेध करके उस पर्वतिथि को झूठी कल्पना से दूसरी तेरस मान कर अब्रह्मचर्य (कुशील) हरासाग (नीलोतरी) का छेदन भेदन आदि पापकृत्यों से

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

उस चतुर्दशी पर्वतिथि को विराधते हैं और पौषधउपवास व्रत करना तथा हरासाग और रात्रिभोजन का त्याग ब्रह्मचर्यपालन आदि धर्मकृत्यों से उस चतुर्दशी पर्वतिथि को पालना निषेध करते हैं, इस से तपगच्छवाले पाप के और पापोपदेश के भागी सिद्ध होते हैं या नहीं ? क्योंकि—

क्षये पूर्वा तिथिः कार्या, वृद्धौ कार्या तथोत्तरा।
श्रीमहावीर निर्वाणे, भव्यै लोकानुगैरिह ॥ १ ॥

इस श्लोक में तो लोकानुवर्त्ती भव्यजीवों को श्रीमहावीर निर्वाण संबंधी कार्त्तिक अमावास्या तिथि क्षय हो तो पूर्व तिथि करना तथा उस तिथि की वृद्धि हो तो उत्तर तिथि करना लिखा है, परंतु तपगच्छवाले पहिली अमावास्या और पहिली पूर्णिमा में पाक्षिक या चातुर्मासिक प्रतिक्रमणादि कृत्य करते हैं, अस्तु किंतु पास में रही हुई चतुर्दशी पर्वतिथि में पौषधादि धर्मकृत्य करने निषेध कर पापकृत्य तपगच्छवाले करते हैं सो यह मंतव्य कोई भी सिद्धांतपाठों से संमत नहीं है।

३ [प्रश्न] अमावास्या और पूर्णिमा का क्षय होने से तपगच्छवाले क्षयेपूर्वा० इस श्लोक से विरुद्ध तेरस अपर्वतिथि में पौषध और पाक्षिक तथा चातुर्मासिक प्रतिक्रमण करते हैं किंतु पास में रही हुई सूर्योदययुक्त चतुर्दशी पर्वतिथि में पौषध और पाक्षिक या चातुर्मासिक प्रतिक्रमण नहीं करते हैं, इससे तपगच्छ वाले आगम और आचरणा-विरुद्ध दोष के भागी होते हैं या नहीं ?

क्योंकि श्रीहेमाचार्य महाराज के गुरु श्रीदेवचंद्रसूरिजी महाराज ने स्वविरचित श्रीठाणावृत्ति में लिखा है कि—

एवं च कारणेणं कालगायरिएहिं चउत्थीए पज्जोसवणं

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

पवत्तिअं समत्तसंघेण य अणुमन्निअं तव्वसेण य पक्खि-आईणि वि चउद्दासिए आयरिआणि अन्नहा आगमुत्ताणि पुणिमाएत्ति।

अर्थ—कारण से श्रीकालकाचार्य महाराज ने चौथ को श्री-पर्युषण पर्व करने की प्रवृत्ति की और समस्त संघ ने (अणु) पश्चात् चौथ को पर्युषण पर्व माना है उसी के वश से अमावास्या पूर्णिमा संबंधी पाक्षिक और चातुर्मासिक प्रतिक्रमणादि कृत्य भी चतुर्दशी पर्वतिथि में आचरण किये हैं अन्यथा आगम में कहे हुए पाक्षिक चातुर्मासिक प्रतिक्रमणादि कृत्य अमावास्या पूर्णिमा में करने के हैं सो आचरणा से चतुर्दशी पर्वतिथि में करते हैं, इसलिये तेरस तिथि में पाक्षिक और चातुर्मासिक प्रतिक्रमणादि कृत्य करने आगम और आचरणा से विरुद्ध हैं।

और श्रीहीरविजयसूरिजी कृत हीरप्रश्न ग्रंथ में लिखा है कि—

पंचमी तिथिस्त्रुटिता भवति तदा तत्तपः कस्यां तिथौ क्रियते, पूर्णिमायां च त्रुटितायां कुत्रेति अत्र पंचमी तिथि-स्त्रुटिता भवति तदा तत्तपः पूर्वस्यां तिथौ क्रियते, पूर्णिमायां च त्रुटितायां त्रयोदशी चतुर्दश्योः क्रियते, त्रयोदश्यां विस्मृतौ तु प्रतिपद्यऽपीति।

इस पाठ में पूर्णिमा की त्रुटि होने पर पूर्णिमा संबंधी तप त्रयोदशी आदि तिथियों में करना लिखा है परंतु पूर्णिमा संबंधी पाक्षिक या चातुर्मासिक प्रतिक्रमणादि कृत्य तेरस तिथि में करने नहीं लिखे हैं।

४ [प्रश्न] चतुर्दशी का क्षय होने से चतुर्दशी पर्वतिथि संबंधी नीलोतरी का त्याग तथा शील व्रत और पूजा आदि

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

नियम तेरस तिथि में पालने युक्त हैं, किंतु अमावास्या पूर्णिमा संबंधी पाक्षिक और चातुर्मासिक प्रतिक्रमणादि कृत्य तेरस तिथि में करने आगम और आचरणा से संमत नहीं हैं, इसी लिये पाक्षिक और चातुर्मासिक संबंधी प्रतिक्रमणादि कृत्य चौदस न हो तो अमावास्या और पूर्णिमा में ही करने आगम से संमत हैं। तथापि तपगच्छवाले तेरस तिथि में पाक्षिक और चातुर्मासिक प्रतिक्रमणादि कृत्य करते हैं सो अनुचित है या नहीं ?

क्योंकि श्रीउमास्वातिजी श्रीहरिभद्रसूरिजी आदि महाराजों के वचनों पर कौन भव्य श्रद्धावान् नहीं होगा ? देखो उन महापुरुषों के युक्तियुक्त वचनों को—

तिहिपडणे पुव्वतिही, कायव्वा जुत्तधम्मकज्जेसु ।
चाउद्दसी विलोवे, पुण्णिमिअं पक्खिपडिक्कमणं ॥१॥ (उ.)
भवइ जहिं तिहिहाणी पुव्वतिही विद्धिआ य सा कीरइ ।
पक्खी न तेरसीए कुज्जा सा पुण्णिमासीए ॥ १ ॥ (ह.)
छट्ठीसहिया न अट्ठमी, तेरसिसहिअं न पक्खिअं होइ ।
पडिवयसहिअं न कयावि, इअं भणिअं वीअरागेहिं ॥१॥ (ज्यो.)

अर्थ—पर्वतिथि का क्षय हो तो पूर्वतिथि में धर्मकृत्य करने युक्त हैं, जैसा कि अमावास्या या पूर्णिमा पर्वतिथि का क्षय होने पर पूर्वतिथि चतुर्दशी में पाक्षिक या चातुर्मासिक प्रतिक्रमणादि कृत्य करने युक्त हैं और चतुर्दशी का क्षय होने पर अमावास्या या पूर्णिमा संबंधी चातुर्मासिक या पाक्षिक प्रतिक्रमणादि कृत्य अमावास्या या पूर्णिमा पर्वतिथि में करने उचित हैं। जैसे कि चौथ न हो तो पंचमी में सांवत्सरिक प्रतिक्रमण करना उचित है तीज में नहीं, वैसे ही तेरस तिथि में पाक्षिक

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

या चातुर्मासिक प्रतिक्रमणादि कृत्य करना आगम और आचरणा से संमत नहीं है। क्योंकि जैसे अष्टमी के कृत्य छठ तिथि में नहीं हो सकते हैं वैसे ही अमावास्या या पूर्णिमा संबंधी पाक्षिक और चातुर्मासिक प्रतिक्रमणादि कृत्य तेरस तिथि में नहीं हो सकते हैं। और प्रतिपदा (एकम) तिथि में कदापि न हो, यह श्रीवीतराग केवली तीर्थंकर महाराजों के वचन हैं, सो तपगच्छ वालों को मानने उचित हैं। अन्यथा—

५ [प्रश्न] दो अमावास्या होने से तपगच्छवाले चतुर्दशी पर्वतिथि में पाक्षिक प्रतिक्रमण तथा पौषधादि धर्मकृत्य निषेध कर पापकृत्य करते हैं और पाहिली अमावास्या पर्वतिथि में पाक्षिक प्रतिक्रमणादि कृत्य करते हैं सो किस आगमपाठ के आधार से करत हैं ? सिद्धांतपाठ दिखलावें।

६ [प्रश्न] दो पूर्णिमा होने से तपगच्छवाले चतुर्दशी पर्व तिथि में पाक्षिक या चातुर्मासिक प्रतिक्रमण तथा पौषधादि धर्मकृत्यों का निषेध करके पापकृत्य करते हैं और पहिली पूर्णिमा पर्वतिथि में पाक्षिक या चातुर्मासिक प्रतिक्रमणादि कृत्य करते हैं सो किस आगम के आधार से करते हैं ? पाठ बतलावें।

७ [प्रश्न] दो चतुर्दशी होने पर दूसरी चतुर्दशी किंचित् समय रहती है, बाद अमावास्या या पूर्णिमा आ जाती है, उसमें तपगच्छवाले पाक्षिक या चातुर्मासिक प्रतिक्रमणादि कृत्य करते हैं और ६० घड़ी की सूर्योदययुक्त पाहेली चतुर्दशी पर्वतिथि में पापकृत्य आचरते हुए उस पर्वतिथि को पाक्षिक या चातुर्मासिक प्रतिक्रमण तथा पौषध आदि धर्मकृत्यों से पालना तपगच्छवाले निषेधते हैं, और दो चतुर्दशी हो तो दो तेरस करना बतलाते हैं, इससे पाप के और पापोपदेश के भागी होते हैं या नहीं ?

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

क्योंकि तपगच्छ के श्रीरत्नशेखरसूरिजी ने— "उदयंमि या तिहि सा पमाणा"—इत्यादि उपर्युक्त गाथा में सूर्योदययुक्त तिथि प्रमाण मानी है और अन्य तिथि करने से आज्ञाभंग १, मिथ्यात्व २ तथा पर्वतिथि विराधने से पाप ३, ये तीन दोष लिखे हैं। तथा श्रीहीरविजयसूरिजी कृत हीरप्रश्न ग्रंथ में लिखा है कि—

पूर्णिमाऽमावास्ययोर्वृद्धौ पूर्वमौदयिकी तिथिराऽऽराध्यत्वेन व्यवह्रियमाणाऽस्तीति केनचिदुक्तं, श्रीतातपादाः पर्वतनीमाऽऽराध्यत्वेन प्रसादयंति तत्किमिति पूर्णिमाऽमावास्ययोर्वृद्धौ औदयिक्येव तिथिराऽऽराध्यत्वेन विज्ञेया।

अर्थ—पूर्णिमा अमावास्या की वृद्धि होने पर सूर्योदययुक्त ६० घड़ी की पहिली अमावास्या और पहिली पूर्णिमा औदयिकी पर्वतिथि पाक्षिक या चातुर्मासिक प्रतिक्रमणादि धर्मकृत्यों से आराधन करने में आती है, ऐसा किसी ने कहा है और (श्रीतातपादाः) श्रीहीरविजयसूरिजी पहिली तिथि को आराधनपने से मानना बतलाते हैं सो क्या कारण हैं? उत्तर—सूर्योदययुक्त औदयिकी तिथि अवश्य आराधनपने से माननी समझना, इस मंतव्य के अनुसार भी औदयिकी पहिली दूज, औदयिकी पहिली पंचमी, औदयिकी पहिली अष्टमी, औदयिकी पहिली एकादशी, औदयिकी ६० घड़ी वाली पहिली चतुर्दशी तपगच्छवालों को धर्मकृत्यों से आराधना उचित है किंतु पापकृत्यों से विराधना सर्वथा अनुचित है।

क्योंकि श्रीसूर्यप्रज्ञप्तिसूत्रटीका आदि ग्रंथों में लिखा है कि—

अहोरात्रस्य द्वाषष्टिभागीकृतस्य सत्का ये एकषष्टिभागास्तावत्प्रमाणा तिथिः।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अर्थ—दिनरात्रि के ६२ भाग किये हों उनमें से ६१ भाग इतने प्रमाणवाली तिथि जैनशास्त्रकारों ने मानी है तो लौकिक टिप्पने के अनुसार सूर्योदययुक्त ६० घड़ी की संपूर्ण पहिली पर्वतिथि को पौषध आदि धर्मकृत्यों से पालना वा मानना निषेध कर उस पर्वतिथि को तपगच्छवाले पापकृत्यों से विराधते हैं सो क्या युक्त है ? नहीं, क्योंकि श्रीहरिभद्रसूरि जी महाराज के वचन पर कौन भव्य श्रद्धावान् नहीं होगा ? देखो उन महापुरुष के युक्तियुक्त वचन को—

तिहि वुढ्ढीए पुव्वा, गहिया पड़िपुन्नभोगसंजुत्ता ।
इयरावि माणणिज्जा, परं थोवत्ति तत्तुल्ला ॥१॥

अर्थ—तिथि की वृद्धि हो तो पहिली तिथि सूर्योदय युक्त ६० घड़ी की परिपूर्ण भोगवाली होती है, इसलिये पहिली तिथि उपवास ब्रह्मचर्य आदि धर्मकृत्यों में ग्रहण करना और आराधना युक्त है, विराधना उचित नहीं। और दूसरी तिथि भी नाम सदृश किंचित् होती है, इसलिये नीलोतरी कुशीलादि का त्याग करके मानने योग्य है। खरतरगच्छवाले वैसाही मानते हैं। और सूर्योदययुक्त संपूर्ण तिथि न मिले तो सूर्योदययुक्त अल्पतिथि भी मान्य होती है। तत्संबंधी पाठ। यथा—

अह जइ कहवि न लब्भंति, ताओ सूरुग्गमेण जुत्ताओ ।
ता अवरविद्ध अवरावि, हुज्ज न हु पुव्वतिहिविद्धा ॥ १ ॥

अर्थ—अथ यदि किसी तरह भी (ताओ) वह संपूर्ण तिथियाँ न मिलें तो सूर्योदय करके युक्त (ता) वह (अवरविद्ध अवराविहुज्ज) याने दूसरी तिथि में विद्धाणी हुई पूर्वतिथि भी मान्य होती है, जैसे कि सूर्योदय में चतुर्दशी है, बाद पूर्णिमा

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

हो तो दूसरी तिथि पूर्णिमा में विद्धाणी हुई सूर्योदय करके युक्त पूर्वतिथि अल्प चतुर्दशी भी मान्य होती है । और (न हु पुव्व तिहि विद्धा) याने पूर्वतिथि से विद्धाणी हुई सूर्योदयरहित पर तिथि प्रमाण नहीं की जाती है । जैसे कि सूर्योदय से दो घड़ी त्रयोदशी है उसके अनंतर चतुर्दशी होवे तो सूर्योदयरहित वह चतुर्दशी प्रमाण नहीं की जायगी, किंतु सूर्योदय करके युक्त पूर्वतिथि दो घड़ी की अल्प त्रयोदशी ही मानी जायगी । तपगच्छनायक श्रीरत्नशेखरसूरिजी ने भी श्राद्धविधि ग्रंथ में लिखा है कि—

पारासरस्मृत्यादावपि आदित्योदयवेलायां, या स्तोकापि तिथिर्भवेत्, सा संपूर्णेति मंतव्या प्रभूता नोदयं विना ॥१॥

अर्थ—पारासरस्मृति आदि ग्रंथों में भी कहा है कि सूर्योदय के समय में थोड़ीसी भी जो तिथि हो तो वही तिथि संपूर्ण मान लेनी चाहिये और सूर्योदय के वक्त जो तिथि न हो और पश्चात् बहुत हो तो सूर्योदयरहित वह तिथि नहीं मानी जाती है । श्रीदशाश्रुतस्कंध भाष्यकार महाराज ने भी लिखा है कि—

चाउम्मासिय वरिसे, पक्खिय पंचट्ठमीसु नायव्वा ।
ताओ तिहिओ ज्जासिं, उदेइ सूरो न अन्नाओ ॥१॥

अर्थ—चातुर्मासिक, सांवत्सरिक, पाक्षिक और पंचमी, अष्टमी इत्यादि पर्वदिनों में वही तिथियाँ मानने योग्य जाननी जिन चातुर्मासिक आदि पर्वतिथियों में सूर्य उदय हुआ हो और सूर्योदयरहित अन्यतिथियाँ मान्य नहीं हैं । याने सूर्योदय के समय में चातुर्मासिक, सांवत्सरिक, पाक्षिक आदि पर्वतिथियाँ हों उन्हीं तिथियों में चातुर्मासिक, सांवत्सरिक, पाक्षिकादि प्रतिक्रमण पौषध आदि धर्मकृत्य करने चाहियें, यह शास्त्रकारों की आज्ञा है । अतएव

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

दो चतुर्दशी या दो अमावास्या वा दो पूर्णिमा होने पर सूर्योदय-युक्त प्रथम चतुर्दशी पर्वतिथि को और दूज आदि पहिली पर्व-तिथि को पापकृत्यों के द्वारा विराधने से तपगच्छवाले दोष के भागी होते हैं। और चतुर्दशी वा अमावास्या या पूर्णिमा का क्षय होने से तपगच्छवाले तेरस तिथि को पाक्षिक या चातुर्मासिक प्रतिक्रमण करते हैं सो भी आगम और आचरणा से संमत नहीं है। क्योंकि उपर्युक्त गाथा से स्पष्ट विदित होता है कि सूर्योदय-युक्त चातुर्मासिक आदि पर्वतिथियों में चातुर्मासिक पाक्षिक प्रतिक्रमणादि कृत्य करने के हैं अन्य तेरस तिथि को नहीं, इस लिये चतुर्दशी का क्षय हो तो आगम-संमत पूर्णिमा, अमावास्या में और अमावास्या या पूर्णिमा का क्षय हो तो आचरणा-संमत चतुर्दशी में पाक्षिक या चातुर्मासिक प्रतिक्रमणादि कृत्य करने उचित हैं। परन्तु अमावास्या या पूर्णिमा संबंधी पाक्षिक या चातु-र्मासिक प्रतिक्रमणादि कृत्य तेरस में करने युक्त नहीं, एवं पंचमी संबंधी सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्य भी तीज तिथि में करने युक्त नहीं, किंतु आचरणा से चौथ तिथि में करने और चौथ तिथि का क्षय हो तो आगम-संमत पंचमी तिथि में करने युक्त हैं। इसी तरह अष्टमी संबंधी व्रत नियमादि का पालन छठ तिथि में करना उचित नहीं, किंतु अष्टमी का क्षय हो तो सप्तमी में करना अन्यथा अष्टमी में करना उचित है। एवं द्वितीया आदि पर्वतिथि का क्षय हो तो पूर्वतिथि में तपपूजादि नियम का पालन करना मना नहीं है, करे किंतु तीज तिथि में सांवत्सरिक प्रतिक्रमण और तेरस तिथि में पाक्षिक चातुर्मासिक प्रतिक्रमण न करे। उपर्युक्त पाठों की आज्ञा के अनुकूल उक्त रीति से अवश्य करे।

८ [प्रश्न] दो अष्टमी होने से सूर्योदययुक्त ६० घड़ी की पहिली अष्टमी पर्वतिथि को तपगच्छवाले नीलोतरी और कुशील का त्याग तथा पौषध आदि धर्मकृत्य नहीं करते हैं, किंतु उस

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

संपूर्ण पर्वतिथि को झूठी कल्पना से दूसरी सप्तमी मानकर कुशील नीलोतरी का छेदन भेदन आदि पापकृत्यों से विराधते हैं और ब्रह्मचर्य तथा पौषध और नीलोतरी का त्याग इत्यादि धर्मकृत्यों से उस ६० घड़ी की संपूर्ण पर्वतिथि को पालना निषेधते हैं, इस से तपगच्छवाले पाप के और पापोपदेश के भागी होते हैं या नहीं?

६ [प्रश्न] तपगच्छवाले भाद्रपद शुक्ल पहिली पंचमी पर्वतिथि को पौषध तथा सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि धर्मकृत्यों से मानते हैं और चतुर्दशी पर्वतिथि को पापकृत्यों से विराध कर पहिली अमावास्या में या पहिली पूर्णिमा में पौषध तथा पाक्षिक या चातुर्मासिक प्रतिक्रमणादि धर्मकृत्य करते हैं तो इसी तरह अन्य मास संबंधी द्वितीया, पंचमी, अष्टमी आदि पहिली पर्वतिथियों को कल्याणक संबंधी पौषधोपवास करना तथा ब्रह्मचर्य पालना और नीलोतरी नहीं खाना, रात्रि भोजन नहीं करना इत्यादि धर्मकृत्यों से आराधना उचित है; तथापि तपगच्छवाले उन द्वितीया पंचमी आदि पहिली पर्वतिथियों को कुशील सेवन, नीलोतरी का भक्षण इत्यादि पापकृत्यों के द्वारा विराधते हैं और उन द्वितीया, पंचमी आदि पहिली पर्वतिथियों को कल्याणक संबंधी पौषध करना कुशील और नीलोतरी का त्याग इत्यादि नियम द्वारा पालना तपगच्छवाले निषेध करते हैं और लिखते भी हैं कि—"दो तिथियाँ होवें तव संपूर्ण ऐसा समझ कर पहिली तिथि को न अंगीकार करे। दो अष्टमी हो तो दो सप्तमी करनां, तथा दो चतुर्दशी हो तो दो तेरस करना।" इस प्रकार सूर्योदययुक्त ६० घड़ी की पहिली संपूर्ण पर्वतिथि को अपर्वतिथि करनां बतला कर पापकृत्य करवाते हैं, इससे पाप के और पापोपदेश के भागी सिद्ध होते हैं या नहीं?

क्योंकि श्रीदशाश्रुतस्कंध भाष्यकार महाराजने भी लिखा है कि—

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

पूआ पच्चख्खाणं, पड़िक्कमणं तहय नित्रमग्गहणं च ।
ज्जाए उदेइ सूरो, ताए तिहीए उ कायव्वं ॥ १ ॥
उदयंमि जा तिही सा, पमाण मियरा उ कीरमाणाणं ।
आणा भंगण वत्था१, मिच्छत्त२ विराहणा पावं३ ॥२॥

अर्थ–जिस पर्वतिथि में सूर्य उदय हुआ हो उस सूर्योदययुक्त पर्वतिथि में अवश्य पूजा पच्चख्खान प्रतिक्रमण तथा नियम ग्रहण इत्यादि धर्मकृत्य करने चाहियें ॥१॥ क्योंकि सूर्योदय में जो पर्वतिथि हो सो मानना प्रमाण है (इयरा) अन्य अपर्व-तिथियाँ करनेवालों को जैसे कि दो अष्टमी हो तो दो सप्तमी करनेवालों को तथा दो चतुर्दशी वा दो अमावास्या या दो पूर्णिमा हो तो दो तेरस करनेवालों को आज्ञाभंग अवस्था १, मिथ्यात्व २, पर्वतिथि पापकृत्यों से विराधने से पाप ३, ये तीन दोष अवश्य लगते हैं ॥२॥

१०[प्रश्न] शास्त्रों में सूर्योदययुक्त पर्वतिथियाँ धर्मकृत्यों से मानना लिखा है, तथापि तपगच्छवाले सूर्योदययुक्त दो द्वितीया आदि पर्वतिथियाँ हो तो दो एकम इत्यादि करना बतलाकर पहिली ६० घड़ी की सूर्योदययुक्त द्वितीया आदि संपूर्ण पर्वतिथियों में पापकृत्य करवाते हैं और सूर्योदययुक्त ६० घड़ी की पहिली द्वितीया आदि संपूर्ण पर्वतिथियों को धर्मकृत्यों से पालना निषेधते हैं तो तपगच्छवाले दो दूज की दो एकम करना बतला कर एकम तिथि संबंधी कल्याणक तप और पौषध आदि धर्मकृत्यों से उस सूर्योदययुक्त पहिली एकम तिथि को मानना बतलाते हैं कि सूर्योदययुक्त पहिली दूजरूप दूसरी एकम को ?

क्योंकि सूर्योदययुक्त उस पहिली एकम तिथि को मानना

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

बतलाते हो तो सूर्योदययुक्त पहिली तिथि को नहीं मानना यह तपगच्छवालों का मत महामिथ्या ही सिद्ध होगा और सूर्योदय-युक्त उस पहिली एकम तिथि को मानना निषेधोंगे तो आज्ञा-भंग आदि उक्त दोषों की गठरी आप लोगों के शिर पर ही रहेगी।

११ [प्रश्न] तपगच्छवाले सूर्योदययुक्त पहिली पंचमी पर्व-तिथि को धर्मकृत्यों से पालना निषेध कर उस तिथि को पाप-कृत्यों के लिये दूसरी चौथ तिथि करना बतलाते हैं तो उस चौथ तिथि संबंधी कल्याणक तप और पौषध आदि धर्मकृत्यों से उस पहिली चौथ तिथि को मानना बतलाते हैं कि पहिली पंचमी रूप दूसरी चौथ तिथि को ?

१२ [प्रश्न] तपगच्छवाले सूर्योदययुक्त दो अष्टमी हो तो पापकृत्य करने के वास्ते दो सप्तमी करना बतलाते हैं और पहिली अष्टमी पर्वतिथि को पौषध आदि धर्मकृत्यों से मानना निषेधते हैं तो उस सप्तमी तिथि संबंधी कल्याणक तप तथा पौषध आदि धर्मकृत्य उस पहिली सप्तमी को करना बतलाते हैं कि पहिली अष्टमी रूप दूसरी सप्तमी को ?

१३ [प्रश्न] सूर्योदययुक्त दो एकादशी तिथि हों तो ६० घड़ी की पहिली एकादशी को कल्याणक संबंधी पौषधतप आदि धर्मकृत्य निषेधने के लिये और पापकृत्य करने के वास्ते तप-गच्छवाले दो दशमी तिथि करना बतलाते हैं तो उस दशमी तिथि संबंधी कल्याणक तप तथा पौषध आदि धर्मकृत्य उस पहिली दशमी तिथि में करने बतलाते हैं कि दूसरी कल्पित दशमी तिथि में ?

१४ [प्रश्न] सूर्योदययुक्त दो चतुर्दशी हो तो ६० घड़ी की पहिली चतुर्दशी पर्वतिथि को पौषधादि धर्मकृत्य निषेधने के लिये तथा पापकृत्य करने के वास्ते तपगच्छ वाले दो तेरस करना

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

बतलाते हैं और दो अमावास्या हो तथा दो पूर्णिमा हो तो भी चतुर्दशी को पौषध आदि धर्मकृत्य निषेधने के लिये और पापकृत्य करने के वास्ते तपगच्छ वाले चतुर्दशी पर्वतिथि को दूसरी तेरस करते हैं और पहिली अमावास्या पर्वतिथि को तथा पहिली पूर्णिमा पर्वतिथि को मानना बतलाते हैं परंतु उस तेरस तिथि संबंधी कल्याणक तप तथा पौषधादि धर्मकृत्य सूर्योदययुक्त उस पहिली तेरस तिथि को करना बतलाते हैं कि उदय चतुर्दशी रूप दूसरी कल्पित तेरस को ?

१५ [प्रश्न] तपगच्छवाले पौषधादि धर्म कृत्य निषेधने के लिये चौदस तिथि की वृद्धि नहीं हो तो भी सूर्योदययुक्त चौदस को दूसरी तेरस करना बतलाते हैं और सूर्योदययुक्त पहिली अमावास्या को वा पहिली पूर्णिमा को चौदस करना बतलाते हैं तो उस चतुर्दशी संबंधी कल्याणक तप और पौषध आदि धर्मकृत्य सूर्योदययुक्त उस चतुर्दशी में करना बतलाते हैं कि सूर्योदययुक्त पहिली पूर्णिमा में वा पहिली अमावास्या में ?

१६ [प्रश्न] श्रीसूर्यप्रज्ञप्ति आदि जैन ज्योतिष के ग्रंथों में गणित से अपर्व तथा पर्वतिथियों का क्षय होना लिखा है किंतु तिथियों की वृद्धि होना नहीं लिखा है, याने तिथियों की वृद्धि द्वारा दूसरी तेरस या दूसरी चौदस होना इत्यादि नहीं लिखा है और लौकिक टिप्पने से दो अमावास्या या दो पूर्णिमा आदि पर्वतिथियां हो तो सूर्योदययुक्त चौदस पर्वतिथि को दूसरी तेरस करना इत्यादि भी नहीं लिखा है; तथापि तपगच्छवाले लौकिक टिप्पने के गणितानुसार दो अमावास्या या दो पूर्णिमा आदि पर्वतिथियाँ हों तो दो तेरस आदि अन्य अपर्वतिथियाँ करना बतलाते हैं सो श्रीसूर्यप्रज्ञप्ति आदि जैनज्योतिष ग्रंथों के किस पाठों के आधार से ?

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

क्योंकि अनेक शास्त्रकारों ने सूर्योदय में जो तिथि हो सो माननी प्रमाण लिखी हैं, अन्य तिथियाँ करनेवालों को आज्ञा-भंग अवस्था १, मिथ्यात्व २ तथा पर्वतिथि विराधने से पाप ३, ये तीन दोष लिखे हैं। वास्ते उपर्युक्त १६ प्रश्नों के १६ उत्तर तपगच्छ के पन्यास श्रीआनंदसागरजी शास्त्रप्रमाणों से स्पष्ट रूप से अलग अलग प्रकाशित करें। किंबहुना इत्यलम् प्रसंगेन ?

---

* तीसरा प्रश्न *

तपगच्छ के श्रीआनंदसागरजी ने स्वप्रतिज्ञापत्र में लिखा है कि [श्रावणभाद्रपदाऽन्यतरवृद्धौ सांवत्सरिकप्रतिक्रांतिः कदाकार्या ?] अर्थात् लौकिक टिप्पने के अनुसार श्रावण या भद्रपद मास की वृद्धि हो तो उस अभिवर्द्धित वर्ष में सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पर्युषण पर्व के कृत्य आषाढ़ चतुर्मासी से कितने दिने करना आगम-संमत है ?

उत्तर—श्रावण मास की वृद्धि हो तो ८० दिने भाद्रपद में और भाद्रपद मास की वृद्धि हो तो दूसरे भाद्रपद अधिकमास में ८० दिने सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पर्युषण पर्व के कृत्य करने आगम-संमत नहीं हैं किंतु ५० दिने दूसरे श्रावण में वा ५० दिने प्रथम भाद्रपद में करने आगम-संमत हैं। देखिये तपगच्छ के धर्मसागरजी ने कल्पसूत्र की कल्पकिरणावली टीका में तथा जयविजयजी ने कल्पदीपिका टीका में और विनयविजयजी ने कल्पसुबोधिका टीका में लिखा है कि—

गृहिज्ञाता तु द्विधा सांवत्सरिककृत्यविशिष्टा गृहिज्ञातमात्रा च तत्र सांवत्सरिककृत्यानि—

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

सांवत्सरप्रतिक्रांति १ र्लुंचनं २ चाष्टमं तपः ३ ।
सर्वार्हद्भक्तिपूजा च ४ संघस्य क्षामणं मिथः ५ ॥ १ ॥

अर्थ—गृहिज्ञात पर्युषण सांवत्सरिक कृत्ययुक्त हैं उस गृहिज्ञात पर्युषण में सांवत्सरिक कृत्य यह करने के हैं कि–सांवत्सरिक प्रतिक्रमण १, लोच २, अष्टम तप ३, चैत्यपरिपाटी ४, संघ को परस्पर क्षामणा करना ५, ये सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्ययुक्त गृहिज्ञात पर्युषण चंद्रवर्ष में ५० दिने और अभिवर्द्धित वर्ष में जैनटिप्पने के अनुसार २० दिने करने के हैं, ऐसा सिद्धांतों में लिखा है ।

प्रमाण तपगच्छ के श्रीक्षेमकीर्तिसूरिजी महाराज विरचित श्रीवृहत्कल्पसूत्र की टीका में पाठ । यथा—

अभिवर्द्धितवर्षे विंशतिरात्रे गते–इतरेषु च त्रिषु चंद्रसंवत्सरेषु सविंशतिरात्रे मासे गते–गृहिज्ञातं कुर्वंति–इति ।

अर्थ—चंद्र संवत्सरों में आषाढ़ चतुर्मासी से २० रात्रिसहित १ मास अर्थात् ५० दिन बीतने पर और ७० दिन शेष रहने से याने भाद्र शुक्ल चतुर्थी को उपर्युक्त सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्ययुक्त गृहिज्ञात पर्युषण करने के हैं और अभिवर्द्धित वर्ष में जैनटिप्पने के अनुसार आषाढ़ चतुर्मासी से २० रात्रि बीतने पर और १०० दिन शेष रहने से अर्थात् श्रावण शुक्ल चतुर्थी को उपर्युक्त सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्ययुक्त गृहिज्ञात पर्युषण पर्व करने के हैं, परंतु जैनटिप्पने इस काल में नहीं होने से उस पर्युषण के स्थान में लौकिक टिप्पने के अनुसार अभिवर्द्धित वर्ष में आषाढ़ चतुर्मासी से ५० दिने दूसरे श्रावण शुक्ल चतुर्थी को अथवा ५० दिने प्रथम भाद्रपद शुक्ल चतुर्थी को उपर्युक्त सांव-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

त्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्य युक्त श्रीपर्युषणपर्व करने संगत हैं। क्योंकि तपगच्छ के धर्मसागरजी ने कल्पकिरणावली में और जयविजयजी ने कल्पदीपिका में तथा विनयविजयजी में कल्पसुबोधिका टीका में लिखा है कि—

अभिवर्द्धितवर्षे चातुर्मासिकदिनादारभ्य २० विंशत्यादिनैः (पर्युषितव्यं) (वयमत्र स्थितास्म इति पृच्छतां गृहस्थानां पुरो वदंति सा तु गृहिज्ञातमात्रैव) तदपि जैनटिप्पनकाऽनुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगांते चाऽऽषाढ एव वर्द्धते नाऽन्ये मासास्तटिप्पनकं चाऽधुना सम्यग् न ज्ञायतेऽतः ५० पंचाशतैव दिनैः पर्युषणा संगतेति वृद्धाः ॥

अर्थ—अभिवर्द्धित वर्ष में आषाढ़ चतुर्मासी दिन से २० दिने श्रावण सुदी पंचमी को गृहिज्ञात सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्ययुक्त पर्युषण पर्व करने का सिद्धांतों में लिखा है सो जैनटिप्पने के अनुसार हैं, क्योंकि उस जैनटिप्पने में युग के मध्य में पौष और युग के अंत में आषाढ़ मास ही बढ़ता है, अन्य मास नहीं। वे जैनटिप्पने अब अच्छी तरह जानने में नहीं आते हैं, इसीलिये उस अभिवर्द्धित वर्ष के पर्युषण के स्थान में लौकिक टिप्पने के अनुसार ५० दिने दूसरे श्रावण सुदी चौथ को वा ५० दिने प्रथम भाद्र सुदी चौथ को सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्ययुक्त पर्युषण करना संगत है, ऐसा वृद्ध पूर्वाचार्यों का कथन है। इससे सिद्ध हो चुका कि ८० दिने दूसरे भाद्रपद अधिक मास में वा ८० दिने पर्युषण करना संगत नहीं है। और तपगच्छ के धर्मसागरजी आदि ने जैनटिप्पने के अनुसार अभिवर्द्धित वर्ष में २० दिने श्रावण सुदी चौथ को सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्ययुक्त गृहिज्ञात पर्युषण को गृहिज्ञातमात्रा ठहरा कर अभिवर्द्धित वर्ष में

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

आषाढ़ चतुर्मासी से २० दिन-सहित दो मास अर्थात् ८० दिने भाद्र सुदी चौथ को अथवा दूसरे भाद्रपद अधिकमास में सुदी चौथ को ८० दिने सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पर्युषणकृत्य श्रीजिन-आगम-विरुद्ध करना लिखा है, सो साधुओं को और गृहस्थों को जानने मात्र हैं, ८० दिने करने के नहीं है । क्योंकि श्रीपर्युषण कल्पसूत्रादि आगम उद्धारकर्त्ता श्रीमत्देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमणजी महाराज ने जैनटिप्पने नहीं होने से श्रीपर्युषण कल्पसूत्र मूलपाठ में लौकिक टिप्पने के अनुसार लिखा है कि—

वासाणं २० सवीसइराइ १ मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेमो अंतरावियं से कप्पइ नो से कप्पइ तं रयणिं उवायणावित्तएत्ति ।

अर्थ—आषाढ़ चतुर्मासी से वर्षाकाल के २० रात्रि-सहित १ मास अर्थात् ५० दिन बीतने पर वर्षावास के पर्युषण करते हैं और ५० दिन के अंदर भी पर्युषण करने कल्पते हैं, किंतु पर्युषण किये विना ५० वें दिन की रात्रि को उल्लंघन करना कल्पता नहीं है, यह साफ मना लिखा है । वास्ते इस आज्ञा का भंग करके ८० दिने अथवा दूसरे भाद्रपद अधिक मास में २ महीने २० दिने पर्युषण करनेवाले प्रत्यक्ष आगम-विरुद्ध हैं ।

टुक विचार से देखिये कि आश्विन मास की वृद्धि हो तो तपगच्छवाले भी उस अभिवर्द्धित वर्ष में ५० दिने पर्युषण कृत्य करते हैं और कार्त्तिक में चतुर्मासी कृत्य करने से १०० दिन उस क्षेत्र में रहते हैं, उसकी शास्त्रकारों ने मना नहीं लिखी है, किंतु श्रीकल्पसूत्र की टीकाओं में—न कल्पते । मूल में—नो से कप्पइ तं रयणिं उवायणावित्तए—याने ५० वें दिन की रात्रि को सांवत्सरिक श्रीपर्युषणपर्व किये विना उल्लंघना नहीं कल्पता है, यह

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

स्पष्ट मना लिखी है वास्ते श्रावण या भाद्रपद या आश्विन मास की वृद्धि होने पर ५० दिने पर्युषण पर्व के पश्चात् कार्त्तिक सुदी १४ पर्यंत १०० दिन उस क्षेत्र में रहने की आज्ञा हो चुकी, क्योंकि ७० दिने आश्विन सुदी १४ को चतुर्मासी प्रतिक्रमणादि कृत्य करने शास्त्रकारों ने नहीं माने हैं और आपके पूर्वजों के लेखानुसार जैनटिप्पने से २० दिने श्रावण सुदी ४ को तथा लौकिक टिप्पने से ५० दिने दूसरे श्रावण सुदी ४ को पयुषणपर्व करने संगत हैं, यह तो आपको मानना ही पड़ेगा, अन्यथा आज्ञा-भंग दोष आपके शिर पर ही रहेगा। क्योंकि शास्त्रकारों ने स्पष्ट मना लिखा है। इसीलिये ८० दिने भाद्रपद में अथवा दूसरे भाद्रपद अधिक मास में ८० दिने सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पर्युषणकृत्य करने आगमसंमत कदापि नहीं हो सकते हैं।

श्रीठाणांग सूत्र की टीका में श्रीमद्अभयदेवसूरि जी महाराज ने लिखा है कि—

यत्र संवत्सरेऽधिकमासको भवति तत्राऽऽषाढ्याः २० विंशतिदिनानि यावदऽनभिग्रहिक अनिश्चित आवासोऽन्यत्र चंद्रसंवत्सरे सविंशतिरात्रं मासं पंचाशतं दिनानीति अत्र चैते दोषाः छक्कायविराहणया इत्यादि—

अर्थ—जिस संवत्सर में जैनटिप्पने के अनुसार पौष तथा आषाढ़ अधिकमास हो उस अभिवर्द्धित वर्ष में आषाढ़ चतुर्मासी से २० दिन तक अनिश्चित रहने का है, बाद निश्चित १०० दिन रहने का है। क्योंकि विहार करने में छकाय विराधनादि दोष लगे। और चंद्रवर्ष में आषाढ़ चतुर्मासी से ५० दिन तक अनिश्चित रहने का है, बाद ७० दिन उस क्षेत्र में साधु को निश्चित रहने का है। और भी देखिये कि जैनटिप्पने के अनुसार पौष और

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

आषाढ़ मास की वृद्धि होती थी, इसी लिये उस अभिवर्द्धित वर्ष में ५० दिने भाद्रसुदि ५ को नहीं किंतु २० दिने श्रावण सुदी ५ को सांवत्सरिक कृत्ययुक्त गृहिज्ञात पर्युषण करना निर्युक्तिकार श्रीभद्रबाहु स्वामी ने, निशीथचूर्णिकार श्रीजिनदास महत्तराचार्य महराज ने उपर्युक्त बृहत्कल्पसूत्र टीकापाठ में तपगच्छ के श्रीक्षेमकीर्तिसूरिजी इत्यादि महाराजों ने लिखा है तथा चंद्रवर्ष में ५० दिने भाद्र सुदी ५ को करना लिखा है। क्योंकि चंद्रवर्ष में मासवृद्धि नहीं होती है। इसीलिये श्रीसमवायांगसूत्र में भी ७० वें स्थानक का अधिकार के प्रसंग से केवल चंद्रसंवत्सर संबंधी ५० दिन युक्त ७० दिन शेष रहने का पर्युषण का पाठ श्रीगणधर महाराज ने लिखा है कि—

समणे भगवं महावीरे वासाणं २० सवीसइराइ १ मासे (५० दिन) वइक्कंते ७० सत्तरिएहिं राइंदिएहिं सेसेहिं वासावासं पज्जोसवेइ।

अर्थ—इस पाठ के अनुसार मासवृद्धि नहीं होने से चंद्रवर्ष में ७० दिन शेष रहते ५० दिने तपगच्छ तथा खरतरगच्छवाले पर्युषणपर्व के सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्य करते हैं, क्योंकि श्रमण भगवंत महावीर प्रभु चंद्रवर्ष में मासवृद्धि नहीं होने से आषाढ़ चतुर्मासी से वर्षाकाल के ५० और ७० अर्थात् १२० रात्रि दिन के चार मास का वर्षाकाल के २० रात्रि-सहित १ मास अर्थात् ५० दिन बीतने पर और ७० रात्रिदिन शेष रहने पर अर्थात् आषाढ़ चतुर्मासी से ५० दिने भाद्र शुक्ल पंचमी को वर्षाकाल में रहने रूप पर्युषण करते हैं, याने उपर्युक्त सूत्रपाठ का भावार्थ श्रीसमवायांगसूत्र की टीका में लिखा है कि—

५० पंचाशति भाक्तनेषु दिवसेषु तथाविधवसत्यऽभावादि-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

कारणे स्थानांतरमप्याऽऽश्रयति अतिभाद्रपदशुक्लपंचम्यां तु वृक्ष-मूलादावपि निवसतीति हृदयं ।

अर्थ—प्रथम के ५० दिनों में तिस प्रकार का रहने का स्थान नहीं मिला इत्यादि कारण योगे विहार करके दूसरे स्थान को भी श्रीवीरप्रभु आश्रय करते हैं, किंतु आषाढ़ चतुर्मासी से ५० वें दिन भाद्र शुक्ल पंचमी को तो वृक्ष मूल आदि स्थान में भी वर्षाकाल में रहते हैं, यह सूत्रकार श्रीगणधर महाराज का आशय टीकाकार श्रीअभयदेवसूरिजी महाराज ने लिखा है। और यह समवायांग सूत्र का उक्त पाठ केवल चंद्रसंवत्सर के पर्युषण संबंधी है। इसलिये इस पाठ को अभिवर्द्धितवर्ष के पर्युषण के संबंध में बतला कर अधिकमास नहीं मानना, और ८० दिने दूसरे भाद्रपद अधिक मास में पर्युषण करना तथा १०० दिने या पाँच महीने दूसरे कार्त्तिक अधिक मास में कार्त्तिक चतुर्मासी प्रतिक्रमण और विहार करना, यह तपगच्छवालों का मंतव्य सर्वथा उपर्युक्त सूत्रपाठ से तथा टीकापाठ से प्रत्यक्ष विरुद्ध है। क्योंकि ७० दिन शेष समवायांग वाक्य की आज्ञा मानते हो तथा अधिक मास को गिनती में नहीं मानते हो तो पाँच महीने या १०० दिने दूसरे कार्त्तिक अधिकमास में कार्त्तिक चतुर्मासी कृत्य कदाग्रह से क्यों करते हो? ७० दिने स्वाभाविक प्रथम कार्त्तिकमास में चतुर्मासी कृत्य करने में किस आगम के वचनों को बाधा आती है सो प्रमाण बतलाना उचित है, अन्यथा उक्त कदाग्रह को त्याग देना चाहिये क्योंकि जब जैनटिप्पने के अनुसार पौष और आषाढ़ मास की ही वृद्धि होती थी अन्य मासों की नहीं। तब पाँच महीने फाल्गुन में तथा पाँच महीने दूसरे आषाढ़ में चतुर्मासी कृत्य होते थे और चार महीने कार्त्तिक मास में चतुर्मासी कृत्य होते थे, इसलिये पाँच महीने दूसरे कार्त्तिक अधिकमास में चतु-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

मासी कृत्य करने उचित नहीं हैं, किंतु चार महीने प्रथम कार्त्तिक मास में चतुर्मासी कृत्य करने उचित हैं। इसी तरह ५० दिने पर्युषणपर्व करने की शास्त्र की आज्ञा मानते हो तथा अधिकमास को गिनती में नहीं मानते हो तो ८० दिने दूसरे भाद्रपद अधिक मास में कदाग्रह से सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पर्युषणपर्व के कृत्य क्यों करते हो ? ५० दिने स्वाभाविक प्रथम भाद्रपद मास में सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पर्युषणपर्व के कृत्य करने में किस आगम के वचन को बाधा आती है, सो प्रमाण बतलाना उचित है, अन्यथा उक्त कदाग्रह को त्याग देना चाहिये। क्योंकि शास्त्र-आज्ञा का भंग नहीं होने के लिये श्रीकालकाचार्य महाराज ने चंद्रवर्ष में भाद्रपद शुक्ल चतुर्थी को ४६ दिने सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पर्युषणपर्व के कृत्य किये हैं तो ५० दिने स्वाभाविक प्रथम भाद्रपद मास में सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पर्युषणपर्व के कृत्य करने त्याग कर ८० दिने दूसरे भाद्रपद अधिक मास में वा ८० दिने भाद्रपद में सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पर्युषण कृत्य करते हुए शास्त्र-आज्ञा-भंगदोष के भागी क्यों बनते हो ? देखिये कि श्रीपर्युषणाकल्पसूत्र में मूलपाठ (नो से कप्पइ) टीकाओं में (न कल्पते) निशीथचूर्णि आदि ग्रंथों में—

कालगआयरिएहिं भणियं न वट्टति अतिक्कामेउं ।

इत्यादि वाक्यों से ५० वें दिन पंचमी की रात्रि को सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पर्युषण कृत्य किये विना उल्लंघना ही कल्पता नहीं है, इस तरह शास्त्रकारों ने साफ मना लिखा है, तथापि इस आज्ञा का भंग आप लोग करते हैं तो फिर शास्त्रार्थ करने में वा अपना झूठा मंतव्य सिद्ध करने में आप लोगों को किंचित् लज्जा भी नहीं आती है ? अस्तु, किस आगम में लिखा है कि १०० दिने दूसरे कार्तिक अधिकमास में चतुर्मासी कृत्य और

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

८० दिने दूसरे भाद्रपद अधिकमास में सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पर्युषण कृत्य करना ? सर्वसंमत सूत्र निर्युक्ति चूर्णि आदि का पाठ हो तो हाजिर कीजिये, अन्यथा सूत्र-निर्युक्ति-चूर्णि आदि आगम-विरुद्ध आप लोगों का इस विषय में कुटिलता युक्त नाना प्रकार का महामिथ्या उत्सूत्र प्रलाप कौन सत्य मानेगा ? देखिये कि—"भद्दवय शुद्ध पंचमीए" इत्यादि चूर्णिपाठ से तो भाद्रपद शुक्ल पंचमी को ५० दिने चंद्रवर्ष की पर्युषण को शालिवाहन राजा के कहने से ५१ दिने छठ को श्रीकालकाचार्य महाराज ने आज्ञा-भंग-दोष के कारण से नहीं किया, किंतु ४९ दिने चौथ को किया है, तो केवल इस कथन संबंधी चूर्णिपाठ को बतलाकर उसी चूर्णिपाठ से विरुद्ध दूसरे भाद्रपद अधिक मास में ८० दिने वा अभिवर्द्धित वर्ष में भाद्रपद में ८० दिने सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पर्युषण कृत्य करना बतलाते हो, और स्वाभाविक प्रथम भाद्रपद में ५० दिने वा दूसरे श्रावण में ५० दिने सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पर्युषण कृत्य करना निषेधते हो, परंतु निर्युक्तिकार श्रीमान् भद्रबाहु स्वामि और चूर्णिकार श्रीजिनदास महत्तराचार्य महाराज तथा श्रीकल्पसूत्रादि आगम-उद्धारकर्त्ता श्रीदेवर्द्धिगणिक्षमाश्रमणजी महाराज आदि प्राचीन वृद्ध आचार्यों के वचनों पर कौन भव्य श्रद्धावान् नहीं होगा ? देखो श्रीनिर्युक्तिकार महाराज श्रीभद्रबाहु स्वामी ने जैनसिद्धांत टिप्पने के अनुसार पौष और आषाढ़ मास की ही वृद्धि होती थी, इसी से ये असली मूल मुद्दे का अभिवर्द्धित वर्ष संबंधी गृहिज्ञात सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्य युक्त श्रीपर्युषण पर्व २० दिने श्रावण शुक्ल पंचमी को और चंद्रवर्ष संबंधी पर्युषण पर्व ५० दिने भाद्रशुक्ल पंचमी को लिखे है। तत्संबंधी पाठ। यथा—

इत्थय अणभिग्गहियं, २० वीसतिरायं २० सवीसइ १ मासं

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

तेण परमऽभिग्गहियं, गिहिणाय कत्तिओ जाव ॥ १ ॥

अर्थ—आषाढ़ी पूर्णिमा को अनभिग्रहित (अनिश्चित) याने गृहिअज्ञात पर्युषण जिसमें वर्षायोग्य वस्तु ग्रहण करके द्रव्यादि स्थापना करते हैं सो क्षेत्र के अभाव से अभिवर्द्धित वर्ष में आषाढ़ी पूर्णिमा से पाँच पाँच दिनों की वृद्धि करके २० रात्रि पर्यंत और चंद्रवर्ष में २० रात्रिसहित १ मास अर्थात् ५० रात्रि पर्यंत हैं। उसके बाद याने अभिवर्द्धित वर्ष में जैनटिप्पने के अनुसार पौष और आषाढ़ मास की वृद्धि होती है इसीलिये आषाढ़ पूर्णिमा से २० वीं रात्रि श्रावण शुक्ल पंचमी को अभिग्रहित (निश्चित) गृहिज्ञात सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्ययुक्त पर्युषणपर्व करे और १०० दिन यावत् कार्त्तिक पूर्णिमा पर्यंत उस क्षेत्र में साधु रहे तथा चंद्रवर्ष में मासवृद्धि नहीं होती है इसीलिये आषाढ़ पूर्णिमा से ५० वीं रात्रि भाद्र शुक्ल पंचमी को अभिग्रहित (निश्चित) गृहिज्ञात सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्य युक्त पर्युषणपर्व करे और ७० दिन यावत् कार्त्तिक पूर्णिमा पर्यंत उस क्षेत्र में साधु रहे। इसी मंतव्य को श्रीनिर्युक्तिकार महाराज फिर स्पष्ट लिखते हैं कि—

असिवाइ कारणेहिं, अहवा वासं ण सुट्ठु आरद्धं ॥

अभिवड्ढियंमि २० वीसा, इयरेसु ५० सवीसइ मासो ॥ २ ॥

अर्थ—अशिवादि कारणों से विहार करना पड़े अथवा उस क्षेत्र में वर्षा अच्छी तरह आरंभ नहीं हुई तो साधु की निंदा अथवा लोग हलादि से खेती आदि आरंभ करें इत्यादि अधिकरण दोषों के कारणों से श्रीभद्रबाहु स्वामी ने जैनसिद्धांत टिप्पने के अनुसार पौष और आषाढ़ मास की वृद्धि के कारण से उस अभिवर्द्धितवर्ष में २० दिने श्रावण सुदी पंचमी को उप-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

र्युक्त प्रथम गाथा में निश्चित गृहिज्ञात याने सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्ययुक्त पर्युषण करना लिखा है और चंद्रवर्षों में मासवृद्धि नहीं होने के कारण २० दिनसहित १ मास अर्थात् ५० दिने भाद्र सुदी पंचमी को उपर्युक्त प्रथम गाथा में निश्चित गृहिज्ञात सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्ययुक्त पर्युषण करना लिखा है। वास्ते श्रीनिर्युक्तिकार महाराज ने अभिवड्ढियंमि २० वीसा इत्यादि वचन से लिखे हुए गृहिज्ञात पर्युषण को गृहिज्ञातमात्रा ठहरा कर ८० दिने वा दूसरे भाद्रपद अधिक मास में ८० दिने सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्ययुक्त पर्युषण प्रतिपादन करना सूत्र-निर्युक्ति-चूर्णिआदि आगम-विरुद्ध उत्सूत्र प्ररूपणा हैं। क्योंकि इस निर्युक्ति गाथा की व्याख्या श्रीनिशीथचूर्णि में श्रीजिनदास महत्तराचार्य महाराज ने लिखी है तत्संबंधी पाठ यथा--

अभिवड्ढिय वरिसे २० वीसतिराते गते गिहिणातं करेंति तिसु चंदवरिसेसु ५० सवीसतिराते मासे गते गिहिणातं करेंति।

अर्थ—जैन-सिद्धांत-टिप्पने के अनुसार अभिवर्द्धित वर्ष में आषाढ़ पूर्णिमा से २० रात्रि जाने पर अर्थात् श्रावण सुदी पंचमी को गृहिज्ञात याने सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्ययुक्त पर्युषण पर्व करें और तीन चंद्रवर्षों में २० रात्रि-सहित १ मास जाने पर अर्थात् ५० दिन बीतने पर भाद्रपद सुदी पंचमी को गृहिज्ञात याने सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्ययुक्त पर्युषण पर्व करें, ऐसा लिखा है। वास्ते सिद्धांत-विरूद्ध ८० दिने पर्युषण स्थापन करने के लिये गृहिज्ञातमात्रा यह नवीन झूठा भेद कदाग्रही के विना सिद्धांतवादी कौन मानेगा ? क्या यह न्याय है कि सिद्धांतों में लिखे हुए अभिवर्द्धित वर्ष में वीस दिने गृहि-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

ज्ञात पर्युषण भेद को नहीं मानना किंतु आगमविरुद्ध गृहिज्ञात मात्रा नामक पर्युषण भेद की उत्सूत्र प्ररूपणा करके उसको मानना तथा ८० दिने सांवत्सरिक पर्युषण कृत्य करना बतलाना और श्रीपर्युषण कल्पसूत्र आदि आगम में ५० दिन के उपराँत पर्युषण करना मना लिखा है तथापि उस आज्ञा का भंग करना। देखिये श्रीनिशीथचूर्णिकार महाराज आगे फिर स्पष्ट लिखते हैं कि—

जत्थ अधिमासगो पड़ति वरिसे तं अभिवद्ढियवरिसं भणति जत्थ ण पड़ति तं चंदवरिसं सो य अधिमासगो जुगस्स अंते मज्जे वा भवति जइ अंते नियमा दो आसाढा भवंति अह मज्जे दो पोसा सीसो पुच्छति कम्हा अभिवद्ढिय वरिसे २० वीसतिरातं चंदवरिसे ५० सवीसति मासो उच्यते जम्हा अभिवद्ढियवरिसे गिम्हे चेव सो मासो अतिक्कंतो तम्हा वीसदिणा अणभिग्गहियं तं करेंति इयरेसु तिसु चंदव-रिसेसु सवीसति मास इत्यर्थः।

श्रीकल्पसूत्र टीकाकारों ने भी लिखा है कि—

इह पर्युषणा द्विधा गृहिज्ञाता गृह्यऽज्ञाता च तत्र गृहि-णामऽज्ञातायां वर्षायोग्यपीठफलकादौ प्राप्ते कल्पोक्त द्रव्यक्षेत्रकालभावस्थापना क्रियते सा चाऽऽषाढ़पूर्णिमायां योग्यक्षेत्राऽभावे तु पंच पंच दिनवृद्ध्या यावद्भाद्रपदशुक्ल पंचमी एकादशपर्वतिथिषु क्रियते गृहिज्ञातायां तु सांवत्सरिका ऽतिचारालोचनं१ लुंचनं२ पर्युषणायां कल्पसूत्राऽऽकर्षणं वा कथनं ३ चैत्यपरिपाटी ४ अष्टमं तपः ५ सांवत्सरिकं च प्रतिक्रमणं क्रियते इत्यादि।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अर्थ उक्त दोनों पाठों का यह है कि जिस वर्ष में अधिकमास ज्योतिष गणित से आ पड़ता है उसको अभिवर्द्धित वर्ष कहते हैं और जिस वर्ष में अधिकमास ज्योतिष गणित से नहीं आ पड़ता है उसको चंद्रवर्ष कहते हैं। वह अधिक मास श्रीसूर्यप्रज्ञप्ति आदि जैनज्योतिष-सिद्धांत के गणित से पांच वर्ष का एक युग के अंत में और मध्य में होता है। यदि अंत में हो तो नियम से दो आषाढ़ मास होते हैं, याने ६२ वां दूसरा आषाढ़ मास अधिक होता है, अथ मध्य में हो तो दो पौष याने जैन ज्योतिष के गणितनियम से ३१ वां दूसरा पौष मास अधिक होता है। शिष्य पूछता है कि किस कारण से अभिवर्द्धित वर्ष में २० वीं रात्रि श्रावण सुदी पंचमी को गृहिज्ञात सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्ययुक्त पर्युषण करें और चंद्रवर्ष में २० रात्रिसहित १ मास याने ५० वीं रात्रि भाद्र सुदी पंचमी को गृहिज्ञात सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्ययुक्त पर्युषण करें? उत्तर—जिस कारण से याने जैन ज्योतिष सिद्धांत गणित के टिप्पने के अनुसार अभिवर्द्धित वर्ष में शीत या ग्रीष्म ऋतु में निश्चय वह पौष या आषाढ़ एक अधिक मास अतिक्रांत हुआ (बीता) उसी लिये २० दिन अनभिग्रहित याने गृहिअज्ञात जिसमें द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव करके स्थापना पर्युषण करें, और आषाढ़ पूर्णिमा से २० रात्रि बीतने पर याने श्रावण सुदी पंचमी को गृहिज्ञात सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्ययुक्त पर्युषण करें; अन्य तीन चंद्रवर्षों में ५० दिन अनभिग्रहित याने गृहिअज्ञात जिसमें द्रव्य क्षेत्र काल भाव से स्थापना पर्युषण करें और आषाढ़ पूर्णिमा से ५० रात्रि बीतने पर याने भाद्र सुदी पंचमी को गृहिज्ञात सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्ययुक्त पर्युषण करें, ऐसा लिखा है। वास्ते ८० दिने वा दूसरे भाद्रपद अधिक मास में ८० दिने सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्ययुक्त पर्युषण स्थापन करने के लिये जैनटिप्पने के अनुसार अभिवर्द्धित वर्ष में २० दिने

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

गृहिज्ञात पर्युषणा को गृहिज्ञातमात्रा बतलाना, यह प्रत्यक्ष आगमविरुद्ध उत्सूत्र महामिथ्या प्ररूपणा है । उसको सिद्धांत, वादी क्या सत्य मानेगा ? नहीं, क्योंकि उपर्युक्त पाठों में श्रीनिर्युक्तिकार श्रीचूर्णिकार और श्रीटीकाकार महाराजों ने जैनटिप्पने के अनुसार अभिवर्द्धित वर्ष में २० दिने गृहिज्ञात पर्युषणा लिखे हैं । वास्ते तपगच्छ के धर्मसागरजी जयविजयजी, विनयविजयजी आदि ने श्रीकल्पसूत्र की रची, हुई टीकाओं में—

गृहिज्ञाता तु द्विधा सांवत्सरिक कृत्यविशिष्टा गृहिज्ञात मात्रा च तत्र सांवत्सरिक कृत्यानि-सांवत्सरप्रतिक्रांति १ लुंचनं २ चाऽष्टमं तपः ३ सर्वाऽर्हद्भक्तिपूजा च ४ संघस्य क्षामणं मिथः ५ ॥ १ ॥

इत्यादि लेख में गृहिज्ञातमात्रा यह भेद निर्युक्ति चूर्णि टीकादि आगमविरुद्ध लिखा है । क्योंकि श्रीनिर्युक्ति आदि आगमसंमत गृहिज्ञात भेद है, उस गृहिज्ञात पर्युषणा में सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्य करने लिखे हैं सो ठीक हैं, क्योंकि आपके तपगच्छनायक श्रीकुलमंडनसूरिजी महाराज ने श्रीकल्पसूत्र की अवचूरि में लिखा है कि—

गृहिज्ञाता यस्यां तु सांवत्सरिकाऽतिचारालोचनं १ लुंचनं २ पर्युषणायां कल्पसूत्रकथनं ३ चैत्यपरिपाटी ४ अष्टमंतपः ५ सांवत्सरिकं प्रतिक्रमणं च क्रियते ६ यया च व्रतपर्यायवर्षाणि गण्यंते ७ सा चंद्रवर्षे नभस्य शुक्लपंचम्यां कालकसूर्य्यादेशाच्चतुर्थ्यामपि जनप्रकटा कार्या—यत्पुनरऽभिवर्द्धितवर्षे दिनविंशत्या पर्युषितव्यमित्युच्यते तत्सिद्धांतटिप्पनाऽनुसारेण तत्रहि युगमध्ये

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

पौषो युगांते चाऽऽषाढ एव वर्द्धते नाऽन्ये मासास्तानि च टिप्पनानि अधुना न सम्यग् ज्ञायंते ऽतो दिनपंचाशतैव पर्युषणा संगतेतिवृद्धाः ॥

अर्थ—गृहिज्ञात पर्युषण तो वह हैं कि जिस गृहिज्ञात पर्युषण में सांवत्सरिक अतिचार का आलोचन १ केशलुंचन २ पर्युषण में कल्पसूत्र का बाँचना ३ सर्व मंदिरों में जिनदर्शन ४ अष्टमतप (तीन उपवास) ५ सांवत्सरिक प्रतिक्रमण करते हैं ६ और जिस गृहिज्ञात पर्युषण से दीक्षापर्याय वर्षों को गिनते हैं ७ वें गृहिज्ञात पर्युषण चंद्रवर्ष में याने जिस वर्ष में अधिकमास नहीं हो उस वर्ष में आषाढ़ चतुर्मासी से ५० दिन होने से और ७० दिन शेष रहने से अर्थात् भाद्र शुक्ल पंचमी को श्रीकालकाचार्य महाराज की आज्ञा से चतुर्थी को भी लोक प्रसिद्ध करने का है। और जो अभिवर्द्धित वर्ष में याने जिस वर्ष में अधिक मास हो उस वर्ष में जैन सिद्धांत टिप्पने के अनुसार आषाढ़ चतुर्मासी से २० दिन होने से और १०० दिन शेष रहने से अर्थात् श्रावण शुक्ल पंचमी को उपर्युक्त सांवत्सरिक कृत्ययुक्त गृहिज्ञात पर्युषण पर्व करने के हैं—ऐसा श्रीनिर्युक्ति चूर्णि टीकाकार महाराजों ने आगम में लिखा है, सो जैन ज्योतिष सिद्धांत के टिप्पने के अनुसार है। उन जैन टिप्पनों में निश्चय पाँच वर्ष का एक युग के मध्य भाग में ३१ वाँ दूसरा पौष मास और युग के अंत भाग में ६२ वाँ दूसरा आषाढ़ मास ही बढ़ता है। श्रावण भाद्रपद आश्विन आदि अन्य मासों की वृद्धि लौकिक टिप्पनों में होती है, वैसी जैनटिप्पनों में नहीं होती है, वह जैन टिप्पने इस काल में अच्छी तरह जानने में नहीं आते हैं इसीलिये लौकिक टिप्पने के अनुसार ५० दिने अर्थात् पूर्व काल में अभिवर्द्धित वर्ष में जैनटिप्पने के अनुसार

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

२० दिने श्रावण शुक्ल ४ को सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्य-युक्त गहिज्ञात पर्युषण के स्थान में जैन टिप्पने के अभाव से लौकिक टिप्पने के अनुसार ५० दिने दूसरे श्रावण शुक्ल ४ को वा प्रथम भाद्र शुक्ल ४ को सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्ययुक्त श्रीपर्युषण पर्व करना संगत है, ऐसा प्राचीन श्रीवृद्ध पूर्वाचार्य महाराजों का कथन है।

यदि कोई कहे कि जैनटिप्पने में पौषध और आषाढ़ मास बढ़ते थे, इसीलिये २० दिने श्रावण शुदी ४ को पर्युषण के पश्चात् कार्त्तिक सुदी १४ पर्यंत १०० दिन शेष रहने के होते थे और लौकिक टिप्पने में श्रावण भाद्रपद आश्विन आदि मास बढ़ते हैं, वास्ते १ मास वा ३० दिन अधिक आगे अर्थात् ५० दिने दूसरे श्रावण शुदी ४ को वा ५० दिने स्वाभाविक प्रथम भाद्र शुदी ४ को पर्युषण के पश्चात् कार्त्तिक शुदी १४ पर्यंत १०० दिन शेष रहने के होते हैं परंतु कार्त्तिक आदि मासों की वृद्धि हो तो ५० दिने पर्युषण के पश्चात् स्वाभाविक प्रथम कार्त्तिक सुदी १४ पर्यंत ७० दिन ही शेष रहने के होते हैं, तो उत्तर में विदित हो कि इससे ७० दिन शेष समवायांग सूत्र वचन को बाधा नहीं हो सकती है। क्योंकि निर्युक्तिकार श्रीमद्भद्रबाहु-स्वामी ने लिखा है कि—

इय ७० सत्तरी जहण्णा, ८० असीइ ९० णउइ १२० वीसुत्तरसयं च ॥ जइ वासमग्गसिरे, १५० दसरायातिण्णि उक्कोसा ॥ १ ॥ काउण १ मासकप्पं, तत्थेव ठियाण जइ वासमग्गसिरे ॥ सालंबणाणं ६ छम्मासिओ, जेट्ठोग्गहो होइत्ति ॥ २ ॥

अर्थात् चंद्रवर्ष में मास वृद्धि नहीं होने के कारण से ५०

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

दिने भाद्र सुदी ५ को पर्युषण के पश्चात् ७० दिन जघन्यता से और मध्यमता से ८० दिन ९० दिन तथा अभिवर्द्धित वर्ष में मास वृद्धि होने के कारण से (अभिवड्ढियंमि २० वीसा, इयरेसु ५० सवीसइ मासो) २० दिने श्रावण सुदी ५ को पर्युषण के पश्चात् १०० दिन और आषाढ़ पूर्णिमा से कार्त्तिक पूर्णिमा पर्यंत १२० दिन तथा उत्कृष्टता से मगसिर पूर्णिमा पर्यंत ३ दस अर्थात् १३०-१४०-१५० दिन और १ मासकल्प याने दूसरा आषाढ़ अधिक मासकल्प को गिनती में लेकर मगसिर पूर्णिमा पर्यंत ६ मास सालंबी स्थविरकल्पि साधुओं को ज्येष्ठ कालावग्रह से उसी क्षेत्र में रहने की आज्ञा लिखी है, परंतु दूसरे कार्त्तिक में चतुर्मासी कृत्य और ८० दिने वा दूसरे भाद्रपद में ८०दिने पर्युषण कृत्य करने की आज्ञा नहीं लिखी है। क्योंकि श्रीनिशीथचूर्णि और श्रीपर्युषणमूलकल्पसूत्रादि में-"नो से कप्पइ तं रयणिं उवायणावित्तए।" इत्यादि वचनों से आषाढ़ चतुर्मासी से ५० वें दिन पर्युषणपर्व किये विना ५० वें दिन की रात्रि को उल्लंघना मना किया है। वास्ते इस आज्ञा का भंग करके ८० दिने वा दूसरे भाद्रपद अधिक मास में ८० दिने सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्य करने तथा १०० दिने दूसरे कार्त्तिक अधिकमास में चतुर्मासी प्रतिक्रमणादि कृत्य करने सर्वथा निर्मूल सूत्र निर्युक्ति चूर्णि टीकादि से विरुद्ध है। अतएव ये आगम-संमत भी नहीं हो सकते हैं। ऐसा तपगच्छ के श्रीआनंदसागरजी स्वीकार करें और निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर प्रकाशित करें—

१ [प्रश्न] श्रीसमवायांग सूत्र संबंधी—"सत्तरिएहिं राइंदिएहिं सेसेहिं वासावासं पज्जोसवेइ।"—इस ७० दिन शेष वाक्य की आज्ञा मानते हो और अधिक मास को गिनती में नहीं मानते हो

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

तो १०० दिने दूसरे कार्त्तिक अधिक मास में कार्त्तिक चतुर्मासी कृत्य कदाग्रह से क्यों करते हो ? अधिक नहीं याने स्वाभाविक प्रथम कार्त्तिक सुदी १४ को ७० दिने कार्त्तिक चतुर्मासी कृत्य करने में किस आगम के वचन को बाधा आती है ?

२ [प्रश्न] "समणे भगवं महावीरे वासाणं २० सवीसइ राइ ? मासे वइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ ।"—इस श्रीपर्युषणा कल्प-सूत्र तथा श्रीसमवायांग सूत्रवाक्य से ५० दिने श्रीपर्युषणा पर्व करने की शास्त्र की आज्ञा को मानते हो और अधिकमास को गिनती में नहीं मानते हो तो ८० दिने वा दूसरे भाद्रपद अधिक मास में ८० दिने कदाग्रह से सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पर्युषणा पर्व के कृत्य क्यों करते हो ? ५० दिने स्वाभाविक प्रथम भाद्रपद मास में सुदी ४ को सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पर्युषणापर्व के कृत्य करने में किस आगम के वचन को बाधा आती है ?

३ [प्रश्न] "वरिमारत्तं एगखेते अत्थित्ता कत्तियचउम्मासिय पडिवयाए अवस्स गिणागंतव्वं ।" इस निशीथ चूर्णिवाक्य से साधुओं को वर्षाकाल में एक क्षेत्र में कार्त्तिक चातुर्मासिक पूर्णिमा पर्यंत स्थिति करके (पड़िवा) एकम को अवश्य विहार करना लिखा है । वास्ते आश्विनमास की वृद्धि होने से ५० दिने भाद्रसुदी ४ को पर्युषणा पर्व करने के बाद १० दिने भाद्रसुदी १४ को पाक्षिक प्रतिक्रमण करते हो तथा प्रथम आश्विनमास के दो पाक्षिक प्रतिक्रमण में १५-१५ रात्रिदिन गिनती में बोलते हो एवं दूसरे आश्विन अधिकमास के दो पाक्षिक प्रतिक्रमण में भी १५-१५ रात्रि दिन गिनती में बोलते हो और कार्त्तिक वदी १४ के पाक्षिक प्रतिक्रमण में १५ रात्रि दिन गिनती में बोलते हो और १५ दिने कार्त्तिकसुदी १४ को चतुर्मासी प्रतिक्रमणादि

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

कृत्य करते हो। इस तरह पर्युषण के पश्चात् यह उपर्युक्त सब १०० रात्रि दिन शेष आप लोग अपने मुख से गिनती में मान लेते हो तो फिर असत्य प्रलाप द्वारा ७० रात्रि दिन शेष हुए, ऐसा क्यों बोलते हो ?

४ [प्रश्न] श्रावण मास के दो पाक्षिक प्रतिक्रमण में १५-१५ रात्रि दिन गिनती में बोलते हो तथा प्रथम भाद्रपद मास के दो पाक्षिक प्रतिक्रमण में १५—१५ रात्रि दिन गिनती में बोलते हो एवं दूसरा अधिक भाद्रपद मास की वदी १४ के पाक्षिक प्रतिक्रमण में १५ रात्रि दिन गिनती में बोलते हो बाद ५ दिने दूसरा अधिक भाद्रपद सुदी ४ को सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पर्युषणपर्व करते हो, इस तरह आषाढ़ चतुर्मासी से यह उपर्युक्त सब ८० रात्रि दिन आप लोग अपने मुख से गिनती में बतलाते हो, तो फिर ५० रात्रि दिन हुए, ऐसा झूठ क्यों बोलते हो ?

५ [प्रश्न] "एत्थ अधिमासगो चेव मासो गणिज्जति सो वीसाए समं वीसतिरात्तो भणणति चेव"—यह पूर्वधर श्रीपूर्वाचार्य महाराज जी कृत श्रीबृहत्कल्पसूत्र चूर्णिवाक्य से (एत्थ) अभिवर्द्धितवर्ष में जैनटिप्पने के अनुसार पौष और आषाढ़ अधिकमास निश्चय गिनती में लिया जाता है, वह अधिकमास २० रात्रि के साथ होने से २० रात्रि याने आषाढ़सुदी पूर्णिमा से २० दिन वीतने पर श्रावणसुदी ५ को गृहिज्ञात सांवत्सरिक कृत्य युक्त पर्युषणपर्व निर्युक्तिकार श्रीभद्रबाहु स्वामी ने करना लिखा है, वास्ते जैनटिप्पने का सम्यग् ज्ञान के अभाव से लौकिक टिप्पने के अनुसार दूसरे श्रावण अधिकमास को गिनती में मानकर ५० दिने दूसरे श्रावणसुदी ४ को वा ५० दिने प्रथम

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भाद्रपद सुदी ४ को श्रीपर्युषणपर्व करना संगत है, तो ८० दिने वा दूसरे अधिक भाद्रपद सुदी ४ को ८० दिने पर्युषणपर्व असंगत क्यों करते हो ?

६ [प्रश्न] "अभिवद्धियंमि वीसा—तानि च टिप्पनानि अधुनान सम्यग् ज्ञायंते ऽतो दिनपंचाशतैव पर्युषणा संगतेतिवृद्धाः" यह श्रीनिर्युक्ति तथा श्रीपर्युषणकल्पसूत्र टीका वाक्यों से अभिवर्द्धितवर्ष में जैनटिप्पनों में पौष या आषाढ़ मास की वृद्धि के अनुसार १०० दिन शेष रहते २० दिने श्रावण सुदी ४ को और जैनटिप्पने का सम्यग् ज्ञान के अभाव से लौकिक टिप्पने के अनुसार १०० दिन शेष रहते ५० दिने दूसरे श्रावण सुदी ४ को वा ५० दिने प्रथम भाद्र सुदी ४ को सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पर्युषण कृत्य करने प्राचीन श्रीवृद्ध पूर्वाचार्य महाराजों ने संगत कहे हैं और पीछे करने मना लिखे हैं, तथापि इस आज्ञा का भंग करके ८० दिने वा दूसरे भाद्रपद अधिकमास की सुदी ४ को ८० दिने असंगत सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि पर्युषण कृत्य क्यों करते हो ?

७ [प्रश्न] अधिकमास में क्या भूँख नहीं लगती है ? क्या पाप नहीं लगता है ? क्या अधिकमास को काक (कौए) भक्षण कर जाते हैं ? सो किस कारण से उस दूसरे भाद्रपद अधिकमास को वा उसके दोनों पक्षों को या उस अधिकमास के ३० रात्रि दिनों को आप गिनती में नहीं मानते हैं ?

८ [प्रश्न] "गोयमा अभिवद्धियसंवच्छरस्स २६ छविसाइं पव्वाइं ।" इस श्रीसूर्यप्रज्ञप्ति सूत्रवाक्य से गणधर श्रीगौतमस्वामी को तीर्थंकर श्रीवीर परमात्मा ने स्वकीय शुद्ध प्ररूपणा द्वारा अधिकमास के दोनों पक्षों को गिनती में मान के अभिवर्द्धित वर्ष

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

के २६ पक्ष बतलायें हैं तो आप लोग अपनी कपोल कल्पित महामिथ्या उत्सूत्र प्ररूपणा द्वारा अधिकमास को वा उसके दोनों पक्षों को या ३० रात्रि दिनों को गिनती में नहीं मानना क्यों बतलाते हो ? और अभिवर्द्धित वर्ष के १२ मास २४ पक्ष ३६० रात्रि दिन किस सूत्र के वाक्य से बोलते हो ?

६ [प्रश्न] मास वृद्धि नहीं हो तो चंद्रवर्ष में जैसे १२ मास २४ पक्ष ३६० रात्रि दिन बोलते हैं वैसे चंद्र चतुर्मासी में भी ४ मास ८ पक्ष १२० रात्रि दिन बोलते हैं, किंतु अभिवर्द्धित वर्ष की तरह अभिवर्द्धित चतुर्मासी हो याने श्रावण आदि मासों की वृद्धि होने से हरएक पाक्षिक प्रतिक्रमण के अभ्युठीये में एक एक पक्ष १५-१५ रात्रि दिन गिनती में बोलते हो, इस तरह कार्त्तिक सुदी १४ पर्यंत सब ५ मास, १० पक्ष, १५० रात्रि दिन आप लोगों के मुख से गिनती में बोलने में आते हैं, तो फिर कार्त्तिक सुदी १४ के पंचमासी प्रतिक्रमण के अभ्युठीये में ४ मास, ८ पक्ष, १२० रात्रि दिन झूठी गिनती से क्यों बोलते हो ?

१० [प्रश्न] "एगमेगस्सणं भंते पक्खस्स कतिदिवसा पण्णत्ता गोयमा पन्नरसदिवसा इत्यादि ।"—अर्थात् हे भगवन् ! एक एक पक्ष के कितने दिनरात्रि ज्ञानियों ने बतलाये हैं ? हे गौतम, एकम दूज आदि १५ दिनरात्रि बतलाये हैं ; इत्यादि श्रीचंद्रप्रज्ञप्ति सूर्यप्रज्ञप्ति सूत्रादि में लिखे हैं और लौकिक टिप्पने में १३, १४, १५, १६ दिनरात्रि के कमती बेसी समान पक्ष हो जाते हैं तो भी श्रीतीर्थंकर आदि ज्ञानी महाराजों ने अधिक मास को वा उसके दोनों पक्षों को या उसके ३० रात्रिदिनों को गिनती में माने हैं, तथापि असत्य मंतव्य के कदाग्रह से गिनती में नहीं मानना, यह श्रीतीर्थंकर गणधर प्रणीत किस आगम में लिखा है ?

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

११ [प्रश्न] श्रीनेमिनाथ तीर्थंकर महाराज का जन्म कल्याणक तपस्यादि जैसा ५० दिने दूसरे श्रावण सुदी ५ को करते हो वैसाही (अभिवद्ढियंमि वीसा) इस श्रीभद्रबाहुस्वामी के वाक्य से अभिवर्द्धित वर्ष में जैनटिप्पने के अनुसार २० दिने श्रावण सुदी ५ को प्रतिबद्ध सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि कृत्ययुक्त गृहिज्ञात श्रीपर्युषणपर्व के स्थान में जैनटिप्पने का सम्यग् ज्ञान नहीं होने से लौकिक टिप्पने के अनुसार ५० दिने दूसरे श्रावण सुदी ४ को क्यों नहीं करते हो ?

१२ [प्रश्न] अधिकमास में अक्षय तृतीया आदि पर्व करने नहीं मानते हो तो ८० दिने वा दूसरा अभिवर्द्धित भाद्रपद अधिकमास में कृष्णपक्ष की १२ तिथि से पर्युषण पर्व क्यों करते हो ?

१३ [प्रश्न] अधिकमास को लोग नपुंसक मलमास मानते हो और उस अधिकमास में नीच (अधम) कणेर वृक्ष फूलता है, उच्च आम्रवृक्ष नहीं फूलता है। तो आप लोगों के इस कथनानुसार ८० दिने वा दूसरा अभिवर्द्धित भाद्रपद लोग नपुंसक अधिक मलमास में कृष्णपक्ष की १२ तिथि से पर्युषण पर्व करने स्वीकार के नीच कणेरवृक्ष की तरह आप लोग क्यों फूलते हो ? अथवा आगम-संमत ५० दिने पर्युषणपर्व करके प्रफुल्लित क्यों नहीं होते हो ?

१४ [प्रश्न] जैनटिप्पने के अनुसार तथा जैनशास्त्रों में १२ मास का उचित काल से अधिक दूसरा मास अधिक माना है और लौकिक टिप्पने के अनुसार प्रथम मास के दूसरे शुक्ल पक्ष को तथा दूसरे मास के प्रथम कृष्ण पक्ष को अधिकमास मानते हैं, यदि वह गिनती में नहीं तो दूसरे भाद्रपद अधिकमास

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

के प्रथम कृष्ण पक्ष में १२ तिथि से पर्युषण करने क्यों मानते हो ? अथवा उस प्रथम अधिक कृष्ण पक्ष के १५ दिन या ४ दिन पर्युषण के गिनती में मानते हो या नहीं ?

१५ [प्रश्न] गुजराती टिप्पने के अनुसार प्रथम भाद्रपद मास को गिनती में नहीं मानते हो और गुजराती प्रथम भाद्रपद अधिक कृष्ण पक्ष में १२ तिथि से पर्युषण करते हो तो उन ४ दिनों को वा उस अधिक पक्ष के १५ दिनों को गिनती में मानते हो या नहीं ?

१६ [प्रश्न] गुजराती टिप्पने के अनुसार प्रथम भाद्रपद मास को गिनती में नहीं मानते हो और गुजराती प्रथम भाद्रपद मास के प्रथम शुक्ल (सुदी) पक्ष में एकम तिथि से ३५ दिन उपवास एवं ५ मी तिथि से एक मास क्षमण (३० दिन उपवास) तथा गुजराती प्रथम भाद्र वदी ५ मी तिथि से १५ दिन उपवास और वदी १२ तिथि से पर्युषण अट्ठाई (८ दिन उपवास) करते हो तो उस गुजराती प्रथम भाद्रपद अधिकमास के उन ३० दिनों को वा २५ दिनों को या १० दिनों को वा ४ दिनों को गिनती में मानते हो या नहीं ?

१७ [प्रश्न] गुजराती प्रथम श्रावण सुदी ५ से दो मास क्षमण (६० दिन उपवास) तथा गुजराती प्रथम श्रावण बदी ५ से डेढ़ मास क्षमण (४५ दिन उपवास) करते हो तो उन दिनों को गिनती में मानते हो या नहीं ?

१८ [प्रश्न] अधिक मास की १२ पर्वतिथियों को वा ३० तिथियों को व्रत नियमादि पालने मानते हो तो उन १२ पर्व-तिथियों को वा ३० तिथियों को आप लोग गिनती में क्यों नहीं मानते हो ?

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

१६ [प्रश्न] तीर्थंकर महाराजों के शिर पर १२ अंगुल की चूलारूप द्रव्य निक्षेपे को गिनती में मानते हो तो इसी तरह कालपुरुष के शिर पर चूलारूप अधिकमास कालचूला निक्षेपे को वा उसके ३० दिनों को गिनती में क्यों नहीं मानते हो ?

२० [प्रश्न] देवपूजा, प्रभावना, व्याख्यान, व्रत, पच्चख्खान, मुनिदान, दया, प्रतिक्रमणादि दिन प्रतिबद्ध धर्मकृत्य अधिकमास में प्रतिदिन अवश्य करने बतलाते हो तो आषाढ़ चतुर्मासी से ५० दिने प्रतिबद्ध श्रीपर्युषणपर्व है सो ५० दिने दूसरे श्रावण सुदी ४ को वा ५० दिने प्रथमभाद्रपद सुदी ४ को अवश्य करने क्यों नहीं बतलाते हो ? अथवा प्रत्यक्ष आगम-विरुद्ध ८० दिने वा दूसरे भाद्रपद अधिकमास में ८० दिने अप्रतिबद्ध पर्युषण पर्व क्यों करते हो ?

२१ [प्रश्न] अभिवड्ढियंमि वीसा—अभिवर्द्धितवर्ष में जैन टिप्पने के अनुसार २० दिने श्रावण सुदी ५ को सांवत्सरिक कृत्ययुक्त गृहिज्ञात पर्युषण करना, यह पाठ श्रीभद्रबाहु स्वामी का लिखा हुआ शास्त्रों में जैसा मिलता है और–"तानि च टिप्पनानि अधुना न सम्यग् ज्ञायंते ऽतो दिनपंचाशतैव पर्युषणा संगतेतिवृद्धाः ।" उन जैनटिप्पने का सम्यग् ज्ञान नहीं होने से लौकिक टिप्पने के अनुसार ५० दिने दूसरे श्रावण सुदी ४ को वा ५० दिने प्रथम भाद्रपद सुदी ४ को सांवत्सरिक पर्युषण पर्व करना संगत है, यह पाठ श्रीवृद्ध पूर्वाचार्यों का लिखा हुआ शास्त्रों में जैसा मिलता है वैसा–"अभिवढ्ढियवरिसे ८० असीइ दिवसे पज्जोसविज्जइ"–ऐसा पाठ कोई भी आगम में नहीं लिखा है तो ८० दिने वा दूसरे भाद्रपद अधिकमास में ८० दिने पर्युषण

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

आगम-विरुद्ध क्यों करते हो ? अथवा आगमविरुद्ध इस कदाग्रह मत को क्यों नहीं त्यागते हो ?

२२ [प्रश्न] अभिवर्द्धित वर्ष में जैनटिप्पने के अनुसार आषाढ़ चतुर्मासी से २० दिने सांवत्सरिक कृत्ययुक्त गृहिज्ञात पर्युषणा और लौकिक टिप्पने के अनुसार आषाढ़ चतुर्मासी से ५० दिने अवश्य केशलुंचनादि कृत्ययुक्त सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि श्रीपर्युषणा पर्व करना आगम से संमत (युक्त) है, क्योंकि अपवाद से भी ५० वें दिन की रात्रि को गोलोममात्र भी शिर पर केश रखना नहीं कल्पता है, वास्ते उपर्युक्त केशलुंचन सांवत्सरिक प्रतिक्रमणादि सांवत्सरिक कृत्य किये विना ५० वें दिन की रात्रि को उल्लंघना नहीं कल्पता है, तो इस आज्ञा का भंग करके आगम-विरुद्ध ८० दिने वा दूसरे भाद्रपद अधिकमास में ८० दिने केशलोचादि कृत्यों से अयुक्त पर्युषणा क्यों करते हो ?

इन २२ प्रश्नों के उत्तर तपगच्छ के श्रीआनंदसागरजी उत्सूत्र प्ररूपणा वा असत्यता को त्याग कर सत्य प्रकाशित करें। इत्यलं प्रसंगेन।

---

* चौथा प्रश्न *

तपगच्छ के श्रीआनंदसागरजी ने स्वप्रतिज्ञापत्र में लिखा है कि—"जिनवल्लभायोपस्थापनोपसंपदाचायपदेषु कतमत् श्रीनवांगीवृत्तिकारकश्रीअभयदेवसूरिभिः समर्पि"—अर्थात् श्रीनवांगसूत्रों के टीकाकर्त्ता श्रीमद् अभयदेवसूरिजी महाराज के पट्टधर शिष्य श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज को बड़ी दीक्षा १, उपसंपदा २ और

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

आचार्य पद ३, इन तीन वस्तुओं में से नवांगटीकाकार श्रीमद् अभयदेवसूरिजी महाराज ने किस वस्तु को अर्पण किया ?

[उत्तर] श्रीखरतरगच्छ की पट्टावली ग्रंथ में लिखा है कि-

तत्पट्टे त्रिचत्वारिंशत्तमः श्रीजिनवल्लभसूरिः स च प्रथमं कूर्चापुरगच्छीयचैत्यवासिजिनेश्वरसूरेः शिष्यो ऽभूत् ततश्च एकदा दशवैकालिकं पठन्सन् औषधादिकं कुर्वाणं अतिप्रमादिनं स्वगुरुं विलोक्य उद्विग्नचित्तः संजातः तदनंतरं स्वगुरुमापृच्छ्य शुद्धक्रियानिधीनां श्रीअभयदेवसूरीणां पार्श्वे ऽगात् तदुपसंपदं गृहीत्वा तेषामेव शिष्यश्च संजातः क्रमेण सकलशास्त्राण्यऽधीत्य महाविद्वान् बभूव तथा पिंडविशुद्धिप्रकरण १ षडशीतिप्रकरण २ प्रमुखाऽनेकशास्त्राणि कृतवान् तथा दशसहस्रप्रमितरागडश्राद्धान् प्रतिबोधितवान् तथा पुनश्चित्रकूटनगरे श्रीगुरुभिः चंडिका प्रतिबोधिता जीवहिंसा त्याजिता धर्मप्रभावात्सधनीभूतसाधारणश्राद्धेन कारितस्य द्विसप्तति ७२ जिनालयमंडितश्रीमहावीरस्वामिचैत्यस्य प्रतिष्ठा कृता तथा तत्रैव पुरे संवत् सागररसरुद्र ११६७मिते श्रीअभयदेवसूरिवचनादेवभद्राचार्येण तेषां पदस्थापना कृता ॥

अर्थ—श्रीमहावीर स्वामी की संतान पाट परंपरा में ४२ वें पाटे नवांगटीकाकार श्रीअभयदेवसूरिजी महाराज हुए उनके पाट पर ४३ वें श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज हुए वे प्रथम कूर्चापुरगच्छीय चैत्यवासी श्रीजिनेश्वरसूरिजी के शिष्य थे । एक दिन दशवैकालिक सूत्र को पढ़ते हुए अति प्रमादी औषधादि करनेवाले अपने गुरु जिनेश्वरसूरिजी को देख कर

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

उद्विग्नचित्त हुए उसके अनंतर अपने गुरु से पूछ कर शुद्ध क्रिया के निधान नवांगटीकाकार श्रीमद् अभयदेवसूरिजी महाराज के पास गए, उनसे उपसंपद ग्रहण करके उन्हीं के याने नवांगटीकाकार श्रीअभयदेवसूरिजी महाराज के शिष्य श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज हुए, अनुक्रमे सकल शास्त्रों को पढ़ कर महाविद्वान् हुए तथा पिंडविशुद्धि प्रकरण १, संघपट्टक २, षडशीति ३ इत्यादि अनेक प्रकरणशास्त्र किये तथा १०००० दश हजार वागड श्रावक नवीन जैनी किये और चित्रकूट नगर में श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज ने चंडिकादेवी को प्रतिबोधी और जीवहिंसा छुड़ाई तथा धर्म प्रभाव से धनवाला हुआ साधारण नाम का श्रावक ने कराया हुआ ७२ जिनालयमंडित श्रीमहावीर स्वामी के चैत्य (मंदिर) की प्रतिष्ठा करी। उसी चित्रकूट नगर में संवत् ११६७ में श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज को आचार्य पद नवांगटीकाकार श्रीमद् अभयदेवसूरिजी महाराज देवलोक होने से उनके वचन से उन्हीं के संतानीय श्रीदेवभद्राचार्य महाराज ने दिया; याने नवांगटीकाकार श्रीअभयदेवसूरिजी महाराज के पाट पर मुख्य श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज को आचार्य पद में स्थापन किये।

नवांगटीकाकार श्रीअभयदेवसूरिजी महाराज ने श्रीभगवती सूत्र की टीका के अंत में अपने पूर्वजों की पाट परंपरा इस तरह लिखी है कि—

चांद्रे कुले सद्वनकल्पकल्पे—महाद्रुमो धर्मफलप्रदानात् ।
छायान्वितःशस्तविशालशाखः, श्रीवर्द्धमानो मुनिनायकोऽभूत् ?
तत्पुष्पकल्पौ विलसद्विहारसद्गंधसंपूर्णदिशौ समंतात् ।
बभूवतुः शिष्यवरावऽनीचवृत्ती श्रुतज्ञानपरागवंतौ ॥ २ ॥

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

एकस्तयोःसूरिवरो जिनेश्वरः ख्यातस्तथाऽन्योभुविबुद्धिसागरः।
तयोर्विनेयेन विबुद्धिनाप्यलं वृत्तिः कृतैषाऽभयदेवसूरिणा ॥३॥

तयोरेव विनेयानां, तत्पदं चानुकुर्वतां ।
श्रीमतां जिनचंद्राख्यसत्प्रभूणां नियोगतः ॥ ४ ॥
श्रीमज्जिनेश्वराचार्यशिष्याणां गुणशालिनां ।
जिनभद्रमुनींद्राणामस्माकं चांघ्रिसेविनः ॥ ५ ॥
यशश्चंद्रगणेर्गाढ, सहाय्यात्सिद्धिमागता ।
परित्यक्ताऽन्यकृत्यस्य, युक्तायुक्तविवेकिनः ॥ ६ ॥

भावार्थ—श्रीआचारांगसूत्र्यगड़ांग सूत्र की टीका के अंत में—" इत्याचार्यशीलांकविरचितायां श्रीआचारांगटीकायां द्वितीयः श्रुतस्कंधः समाप्तः इत्यादि"–टीकाकार श्रीशीलांकाचार्य महाराज ने लिखा है। किंतु श्रीमहावीर स्वामी से लेकर अपने सब पूर्वजों के नाम वा गुरु दादागुरु के नाम तथा अपना निग्रंथ गच्छ कोटिकगच्छादि नाम या विशेषण नहीं लिखे हैं। इसी तरह श्रीठाणांग आदि नवांगसूत्रटीका के अंत में श्रीअभयदेवसूरिजी महाराज ने भी श्रीमहावीर स्वामी से लेकर अपने सब पूर्वजों के नाम तथा निग्रंथगच्छ १, कोटिकगच्छ २, वज्रशाखा ३, चंद्रकुल ४, बृहत्गच्छ ५, खरतरगच्छ ६ ये सब नाम या विशेषण प्रायः नहीं लिखे हैं, किंतु किसी अज्ञ के प्रश्न के उत्तर में कोई बुद्धिमान् संक्षेप प्रशंसा से अपने कुल का नाम तथा उस में अपने बाप दादे का नाम जैसा बतलाता है वैसा नवांगटीकाकार श्रीअभयदेवसूरिजी महाराज ने भी बालजीवों के कुतर्क वा उनकी अज्ञानता को दूर करने के लिये उपर्युक्त श्लोकों में संक्षेप प्रशंसा से अपने कुल का नाम चंद्रकुल उसमें अपने दादा गुरु

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

का नाम श्रीवर्द्धमानसूरिजी, उनके शिष्य अपने गुरु का नाम श्रीजिनेश्वरसूरिजी, श्रीबुद्धिसागरसूरिजी, उनके लघु शिष्य श्री अभयदेवसूरिजी ने यह श्रीभगवतीसूत्र की टीकाकरी श्रीजिनेश्वरसूरिजी के तथा श्रीबुद्धिसागरसूरिजी के पाटे बड़े शिष्य श्रीजिनचंद्रसूरिजी की आज्ञा से और श्रीजिनेश्वरसूरिजी के शिष्य श्रीजिनभद्रसूरिजी के तथा श्रीअभयदेवसूरिजी के चरण सेवक श्रीयशश्चंद्रगणिजी की सहाय से टीका करने में आई। यह श्रीअभयदेवसूरिजी महाराज ने अपनी गुरुशिष्य-पाटपरंपरा स्पष्ट लिख बतलाई है। और यह पाटपरंपरा खरतरगच्छवालों की है। उसमें नवांगटीकाकार श्रीअभयदेवसूरिजी हुए। तपगच्छ के श्रीमुनिसुंदरसूरिजी महाराज विरचित श्रीउपदेशतरंगिणी ग्रंथ में—"नवांगटीकाकार श्रीअभयदेवसूरिजी उनके शिष्य श्री जिनवल्लभसूरिजी प्रशिष्य श्रीजिनदत्तसूरिजी इन प्रभाविक आचार्यों की स्तुतिद्वारा खरतरगच्छवालों की गुरुशिष्य-प्रशिष्य-पाट परंपरा दिखलाई है कि—

व्याख्याताऽभयदेवसूरिरऽमलप्रज्ञो नवांग्या पुनः।
भव्यानां जिनदत्तसूरिरऽददद्दीक्षां सहस्रस्य तु॥
प्रौढिं श्रीजिनवल्लभो गुरुरऽधीद् ज्ञानादिलक्ष्म्या पुनः।
ग्रंथान् श्रीतिलकश्चकार विविधान् चंद्रप्रभाचार्यवत्॥१॥

अर्थ—निर्मल बुद्धिवाले श्रीअभयदेवसूरिजी महाराज ने नवअंग सूत्रों की टीका करी, उनके प्रशिष्य श्रीजिनदत्तसूरिजी महाराज ने १००० एक हज़ार भव्यजीवों को दीक्षा दी और चंद्रप्रभाचार्य की तरह (श्री) शोभा वा लक्ष्मी के तिलक समान नवांगटीकाकार के शिष्य श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज ज्ञानादि लक्ष्मी से प्रौढ़ता को धारण करते हुए विविध (अनेक) ग्रंथों को करते भये।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

श्रीकल्पांतर्वाच्य में तपगच्छ के श्रीहेमहंससूरिजी महाराज ने भिन्न भिन्न गच्छ के प्रभाविक आचार्यों के अधिकार में लिखा है कि—

"खरतरगच्छे नवांगीवृत्तिकारक श्रीअभयदेवसूरिथया जिये शासनदेवीना वचनथी थंभणाग्रामे सेढी नदीनें उपकंठे जयतिहुअणवत्तीसी नवीन स्तवना करके श्रीपार्श्वनाथजी नी मूर्त्ति प्रगट कीधी धरणेन्द्र प्रत्यक्ष थयो शरीरतणो कोढ़रोग उपशमाव्यो नवअंगनी टीका कीधी तच्छिष्य श्रीजिनवल्लभसूरि थया जिये निर्मल चारित्र सुविहितसंवेगपक्ष धारण करी अनेक ग्रंथतणो निर्माण कीधो तच्छिष्य युगप्रधान श्रीजिनदत्तसूरिथया जिये उज्जैनीचित्तोड़ना मंदिरथी विद्यापोथी प्रगट कीधी देशावरों में विहार करते रजपूतादिकने प्रतिबोधीने सवालाख जैनी श्रावक कीधा इत्यादि"—

श्रीसार्द्धशतकमूलग्रंथ के अंत में लिखा है कि—

जिणवल्लहगणि-रइयं, सुहुमत्थ-वियारलवमिणं सुयणा ॥
निसुणंतु सुणंतु सयं, परेवि बोहिंतु सोहिंतु ॥ १ ॥

श्रीचित्रवालगच्छ के श्रीधनेश्वरसूरिजी महाराज विरचित श्रीसार्द्धशतकमूलग्रंथ की टीका में लिखा है कि—

श्रीजिनवल्लभगणिनामकेन मतिमता सकलार्थसंग्राहिस्थानांगाद्यंगोपांगपंचाशकादिशास्त्रवृत्तिविधानावाप्तावदातकीर्तिसुधाधवलितधरामंडलानां श्रीमदऽभयदेवसूरीणां शिष्येण कर्मप्रकृत्यादिगंभीरशास्त्रेभ्यः समुद्धृत्य रचितमिदं ।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अर्थ—सकल अर्थ के संग्रहवाले स्थानांग आदि नव अंग सूत्र और उपांगसूत्र पंचाशक आदि प्रकरण शास्त्र इन्हों की टीका करने से प्राप्त स्वच्छ कीर्त्तिरूप सुधा से उज्वल किया है पृथ्वीमंडल जिन्होंने ऐसे श्रीमद्अभयदेवसूरिजी महाराज उनके शिष्य मतिमान् श्रीजिनवल्लभगणि है नाम जिनका उन्होंने कर्म प्रकृति आदि गंभीर शास्त्रों से उद्धार करके यह सार्द्धशतक मूल प्रकरण ग्रंथ रचा है। इस तरह चित्रवालगच्छ के श्रीधनेश्वर सूरिजी महाराज ने नवांगटीकाकार श्रीमद्अभयदेवसूरिजी उनके शिष्य श्रीजिनवल्लभ (गणि) सूरिजी, यह गुरु-शिष्य-परंपरा लिख दिखलाई है, तो इन उपर्युक्त शास्त्रप्रमाणों से चंद्र कुल के श्रीवर्द्धमानसूरिजी उनके दो शिष्य श्रीजिनेश्वरसूरिजी तथा श्रीबुद्धिसागरसूरिजी, उनके बड़े शिष्य श्रीजिनचंद्रसूरिजी तथा लघुशिष्य नवांगटीकाकार श्रीअभयदेवसूरिजी उनके शिष्य श्रीजिनवल्लभसूरिजी, उनके शिष्य श्रीजिनदत्तसूरिजी, इत्यादि खरतरगच्छवालों की गुरु-शिष्य-परंपरा में नवांगटीकाकार श्रीअभयदेवसूरिजी महाराज ने श्रीजिनवल्लभसूरिजी महाराज को उपसंपद अर्पण करके अपने शिष्य किये, इत्यादि इस विषय में उपर्युक्त शास्त्र प्रमाणों को देख कर तपगच्छ के श्रीआनंदसागरजी अपनी शंका दूर करें और निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर शास्त्र प्रमाणों से प्रकाशित करें—

१ [प्रश्न] तुमने लिखा कि—"जिनवल्लभ ने बड़ी दीक्षा उपसंपदा इत्यादि" तो हम भी लिखते हैं कि—"जगच्चंद्र को बड़ी दीक्षा १, उपसंपदा २ और आचार्यपदवी ३ इन तीन में से चित्रवालगच्छ के श्रीधनेश्वरसूरिजी के शिष्य श्रीमुवनचंद्रसूरिजी उनके शिष्य शुद्ध संयमी श्रीदेवभद्रगणि ने कौन सी वस्तु दी।

२ [प्रश्न] श्रीजगच्चंद्रजी बड़ी दीक्षा उपसंपदादि ग्रहण

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

करके किस गच्छ के और किस नवीन शुद्ध संयमी गुरु के शिष्य हुए मानते हो ?

३ [प्रश्न] श्रीधर्मरत्नप्रकरण ग्रंथ में चित्रवालक गच्छ के श्रीभुवनचंद्रसूरि उनके शिष्य श्रीदेवभद्रगणि उनके शिष्य श्रीजगच्चंद्रसूरि उनके शिष्य श्रीदेवेंद्रसूरि ने यह उपर्युक्त अपने पूर्वजों की गच्छनाम-सहित-गुरु-शिष्य-परंपरा मानना बतलाया है अन्य नहीं, तो श्रीदेवेंद्रसूरिजी के उक्त कथन से विरुद्ध अपने मन से बृहत्गच्छ तथा श्रीमणिरत्नसूरि उनके शिष्य श्रीजगच्चंद्रसूरि यह गुरु-शिष्य-परंपरा मानना क्यों बतलाते हो ?

४ [प्रश्न] शिथिलाचारी गुरु को त्याग कर शुद्ध संयमी गुरु से उपसंपद दीक्षादि ग्रहण करके उनका शिष्य तथा उसी गच्छपरंपरा में होने के लिये श्रीजगच्चंद्रसूरिजी ने चित्रवाल-गच्छ के श्रीदेवभद्रगणिजी के पास उपसंपद दीक्षादि ग्रहण करके उन गुरु को और उनकी परंपरा को तथा उन्हीं के गच्छ को धारण किया, क्योंकि जिसने जिसके पास उपसंपददीक्षा ग्रहण की हो वह उसी का शिष्य तथा उसी के गच्छ का होता है। वास्ते पीछे प्रथम गुरु की परंपरा में और उन गुरु का शिष्य तथा उन प्रथम गुरु के गच्छ का वह नहीं रहता है। यह मंतव्य श्रीदेवेंद्रसूरि जी के उक्त कथन से स्पष्ट विदित होता है, तो आप अपनी पट्टावली में इसी एक मंतव्य को क्यों नहीं मानते हो ?

५ [प्रश्न] श्रीदेवेंद्रसूरिजी के उक्त कथन से विदित होता है कि—श्रीजगच्चंद्रसूरिजी ने उपसंपद दीक्षादि लेकर चैत्रवाल गच्छ को तथा उस गच्छ के श्रीदेवभद्रगणिजी को और उनके पूर्वजों की परंपरा को स्वीकार किया और अपने प्रथम के गुरु श्रीमणिरत्नसूरिजी को तथा उनके पूर्वजों की परंपरा को और

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

उनके गच्छ को त्यागा, तो फिर पट्टावली में उन गुर्वादिकों को क्यों मानते हो ?

६ [प्रश्न] श्रीसत्यविजयजी ने और श्रीयशोविजयजी ने तथा श्रीनेमसागरजी ने वा उनके गुरु ने यतिपने के शिथिलाचार को त्याग कर क्रिया उद्धार किया तो योग १, बड़ी दीक्षा २, उपसंपद ३, पंन्यासपद ४, उपाध्यायपद ५ किस दूसरे शुद्धसंयमी गुरु के पास ग्रहण किया और किस किस दूसरे शुद्धसंयमी गुरु को धारण करके उनके शिष्य हुए ?

७ [प्रश्न] जिसके गच्छ में पूर्वकाल में दो, तीन, चार पीढ़ी पर कई जनों ने क्रिया उद्धार किया है और उनके शिष्य प्रशिष्यादि साधु साध्वी वर्त्तमान काल में बहुत विचरते हुए नज़र आते हैं उनके गच्छ में कोई वैराग्य भाव से यतिपने के शिथिलाचार को त्याग कर क्रिया उद्धार करके साधु की रीति से विचरता है, उसको दूसरे के पास उपसंपद लेने की और दूसरे का शिष्य होने की आवश्यकता नहीं है, ऐसी शास्त्रकारों की आज्ञा मानते हो तो उन क्रिया उद्धार कारक सुसाधु की निरर्थक निंदा करनेवाले और बालजीवों को भरमानेवाले, शास्त्रविरुद्धवादी वा द्वेषी दुर्गति के भाजन हो या नहीं ?

इन उपर्युक्त ७ प्रश्नों के ७ उत्तर तपगच्छ के श्रीआनंदसागरजी स्पष्ट (खुलासे के साथ) अलग अलग लिख के छापे द्वारा प्रकाशित करें। इत्यलं किंबहुना ?

---

* पाँचवाँ प्रश्न *

तपगच्छ के श्रीआनंदसागरजी ने स्वप्रतिज्ञापत्र में लिखा है कि—श्रीजिनेश्वरसूरये दुर्लभेन राज्ञा पत्तने चैत्यवासिविज-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

येन खरतराबिरुदं सहस्रे समानामऽशीत्यधिके प्रादायि न वा ? अर्थात् अणहिलपुर पाटण में (सुविहित) शुद्ध क्रियावंत साधुओं को नहीं रहने देने के लिये मिथ्या अभिमानी श्रीजिन-मंदिरों में रहनेवाले चैत्यवासी यतियों का बड़ा भारी व्यर्थ कदाग्रह (ज़ोर) को हटाने से खरेतरे याने खरतरबिरुद श्रीजिनेश्वर सूरिजी (नवांगटीकाकार श्रीअभयदेवसूरिजी के गुरु) महाराज को संवत् १०८० में दुर्लभराजा तथा भीमराजा के समय में मिला या नहीं ?

[उत्तर] इस विषय का निर्णय अनेक ग्रंथों के प्रमाणों से श्रीप्रश्नोत्तरमंजरी ग्रंथ में हमने लिख दिखलाया है अतः उस ग्रंथ में देख लेना। और तपगच्छवालों को इस विषय में शंका रखनी सर्वथा अनुचित है। क्योंकि इस अनाभोग को दूर करने के लिये तपगच्छनायक श्रीसोमसुंदरसूरिजी के शिष्य महोपाध्याय श्रीचारित्ररत्नगणिजी के शिष्य पंडित श्रीमत्सोमधर्मगणिजी महाराज ने स्वविरचित उपदेशसप्ततिका नामक महाप्रमाणिक ग्रंथ में लिखा है कि—

पुरा श्री पत्तने राज्यं, कुर्वाणे भीमभूपतौ ।
अभूवन् भूतलाख्याताः, श्रीजिनेश्वरसूरयः ॥ १ ॥
सूरयोऽभयदेवाख्या, स्तेषां पट्टे दिदीपिरे ।
येभ्यः प्रतिष्ठामापन्नो, गच्छः खरतराऽभिधः ॥ २ ॥

भावार्थ—(पुरा) पूर्वकाल में याने संवत् १०८० में अणहिलपुर पाटण में दुर्लभ तथा भीमराजा के राज्य के समय में चैत्यवासी यतियों का सुविहित मुनियों को शहर में नहीं रहने देने का बड़ा भारी व्यर्थ कदाग्रह (ज़ोर) को हटाने से और अत्यंत

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

शुद्धक्रिया आचार से खरेतरे याने खरतरविरुद धारक श्रीजिनेश्वरसूरिजी महाराज भूमंडल में प्रख्यात हुए। उनके पाटे जयतिहुअण स्तोत्र से श्रीस्थंभन पार्श्वनाथ प्रतिमा प्रगटकर्त्ता नवांगटीकाकार श्रीअभयदेवसूरिजी महाराज खरतरगच्छ में महाप्रभाविक हुए, जिनसे खरतर नाम का गच्छ लोक में प्रतिष्ठा को प्राप्त हुआ। इत्यादि अधिकार लिखा है और श्रीप्रभावकचरित्र में भी लिखा है कि—

जिनेश्वरस्ततः सूरिरऽपरो बुद्धिसागरः।
नामभ्यां विश्रुतौ पूज्यै, विहारे ऽनुमतौ तदा ॥ १ ॥
ददे शिक्षेति तैः श्रीमत्, पत्तने चैत्यवासिभिः ॥
विघ्नं सुविहितानां स्यात्, तत्राऽवस्थानवारणात् ॥ २ ॥
युवाभ्यामऽपनेतव्यं, शक्त्या बुद्ध्या च तत् किल ॥
यदिदानींतने काले, नास्ति प्राज्ञो भवत्समः ॥ ३ ॥
अनुशास्ति प्रतीच्छाव, इत्युक्त्वा गुजरावनौ ॥
विहरंतौ शनैः श्रीमत्पत्तनं प्रापतुर्मुदा ॥ ४ ॥
सद्गीतार्थपरीवारौ, तत्र भ्रांतौ गृहे गृहे ॥
विशुद्धोपाश्रयाऽलाभात्, वाचां सस्मरतुर्गुरोः ॥ ५ ॥
श्रीमान् दुर्लभराजाख्य स्तत्र चाऽऽसीद्दिशां पतिः ॥
गीःपतेरऽप्युपाध्यायो, नीतिविक्रमशिक्षणात् ॥ ६ ॥

इत्यादि उपर्युक्त भावार्थवाला अधिकार बहुत लिखा है तथा श्रीखरतरगच्छ की पट्टावली में भी लिखा है कि—

तदा शास्त्राऽविरुद्धाऽऽचारदर्शनेन श्रीजिनेश्वरसूरिमुद्दिश्य-अतिखरा एते इति दुर्लभराज्ञा प्रोक्तं तत एव खरतरविरुदं लब्धं

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

तथा चैत्यवासिनो हि पराजयप्ररूपणात् कुंवला इति नामध्येयं प्राप्ता एवं च सुविहितपक्षधारकाः श्रीजिनेश्वरसूरयो विक्रमतः १०८० वर्षे खरतरविरुदधारका जाताः।

इस तरह अनेक शास्त्रों में यह उपर्युक्त अधिकार स्पष्ट लिखा है, वास्ते तपगच्छ के श्रीआनंदसागरजी अपने पूर्वज श्रीसोमधर्मगणिजी महाराज के उचित तथा शास्त्र-संमत सत्य वचनों में सर्वथा शंका-रहित शुद्ध श्रद्धा धारण करें और द्वेषी के शास्त्रविरुद्ध कपोलकल्पित महामिथ्या अनुचित वचनों पर श्रद्धा नहीं रक्खें, क्योंकि शास्त्रविरुद्ध मिथ्यावचन के कदाग्रह से भवभ्रमण होता है। नवांगटीकाकार श्रीअभयदेवसूरिजी के शिष्य श्रीजिनवल्लभसूरिजी के समय में खरतरगच्छ की मधुकरा-शाखा (पाटगादी) अलग हुई है, उसके स्थान में द्वेष से चामुंडिक मत निकला कहना, यह द्वेषी के कपोलकल्पित मिथ्या आक्षेप-वचन हैं। और नवांगटीकाकार श्रीअभयदेवसूरिजी के प्रशिष्य श्रीजिनदत्तसूरिजी के समय में खरतरगच्छ की रुद्रपल्लिया शाखा (पाटगादी) सं० १२०४ में अलग हुई है, उसके स्थान में द्वेष से १२०४ में ऊष्ट्रिकमत निकला कहना, यह भी द्वेषी के प्रत्यक्ष द्वेष-भाववाले महामिथ्या कपोलकल्पित अनुचित आक्षेप वचन हैं। १२०४ में ऊष्ट्रिकमत हुआ, इसी महामिथ्या आक्षेपवचन के स्थान में १२०४ में श्रीजिनदत्तसूरिजी से खरतरगच्छ खरतरविरुद खरतरमत की उत्पत्ति हुई, इत्यादि कल्पित अनेक मिथ्याप्रलापों से अपने झूठे कदाग्रह मंतव्य को सिद्ध करना कि नवांगटीका-कार श्रीअभयदेवसूरिजी महाराज खरतरगच्छवालों की गुरुशिष्य-परंपरा में नहीं हुए। परंतु उपर्युक्त शास्त्रपाठों से प्रत्यक्षविरुद्ध इन महामिथ्या प्रलापों से अपने झूठे मंतव्य का जय कदापि नहीं कर सकते हैं। वास्ते अपने पूर्वज श्रीसोमधर्मगणिजी के

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

शास्त्रसंमत उपर्युक्त सत्य वचनों से सर्वथा विपरीत महाद्वेषी के कपोलकल्पित अनेक तरह के असत्य वचनों से पराजय फल को बेर बेर प्राप्त होना ठीक नहीं है । अस्तु यदि ऐसाही आग्रह है तो निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर तपगच्छ के श्री-आनंदसागरजी सत्य प्रकाशित करें—

१ [प्रश्न] अंचलगच्छ की पट्टावली आदि ग्रंथों में लिखा है कि—संवत् १२८५ में श्रीजगच्चंद्रसूरिजी से (गाढक्रियस्तापसः) याने तापसमत—तपोट्टमत—(चांडालिकातुल्या) पुष्पवती प्रभुपूजीकामत निकला और श्रीविजयदानसूरिजी के शिष्य धर्म-सागर गणि से संवत् १६१७ में तपौष्ट्रिकमत की उत्पत्ति हुई । श्री-हीरविजयसूरिजी से संवत् १६३६ में गर्दभीमतोत्पत्ति हुई । इस तरह के तपगच्छ के १८ नाम हेतुवृत्तांत सहित लिखे हैं, उनको आपलोग सत्य मानते हो या मिथ्या ?

२ [प्रश्न] क्रमशश्चित्रवालकगच्छे—कविराजराजिनभ-सीव । श्रीभुवनचंद्रसूरिर्गुरुरुदियाय प्रवरतेजाः ॥ १ ॥
तस्य विनेयः प्रशमैकमंदिरं देवभद्रगणिपूज्यः ।
शुचिसमयकनकनिकषो, बभूव भुवि विदितभूरिगुणः ॥२॥
पत्पादपद्मभृंगा, निस्संगाश्चंगतुंगसंवेगा ।
संजनितशुद्धबोद्धा, जगति जगच्चंद्रसूरिवराः ॥३॥
तेषामुभौ विनेयौ, श्रीमान् देवेंद्रसूरिरित्याद्यः ।
श्रीविजयचंद्रसूरि, र्द्वितीयको ऽद्वैतकीर्त्तिभरः ॥४॥
स्वाऽन्योरुपकाराय, श्रीमद्देवेंद्रसूरिणा ।
धर्मरत्नस्य टीकेयं, सुखबोधा विनिर्ममे ॥५॥

ये श्लोक श्रीजगच्चंद्रसूरिजी के मुख्य शिष्य श्रीदेवेंद्रसूरि-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जीने अपनी रची हुई श्रीधर्मरत्नप्रकरण की टीका, उसकी प्रशस्ति में लिखे हैं। इन श्लोकों में तथा श्रीजगच्चंद्रसूरिजी के शिष्य श्रीविजयचंद्रसूरिजी उनके शिष्य श्रीक्षेमकीर्त्तिसूरिजी ने संवत् १३३२ में श्रीबृहत्कल्पसूत्र की टीका रची है, उसकी प्रशस्ति में भी चित्रवालगच्छ में श्रीधनेश्वरसूरिजी, उनके शिष्य श्रीभुवनचंद्रसूरिजी, उनके शिष्य श्रीदेवभद्रगणिजी, उनके शिष्य श्रीजगच्चंद्रसूरिजी इत्यादि लिखा है। किंतु न तो अपना या श्रीजगच्चंद्रसूरिजी का बृहत्गच्छ वा तपगच्छ ऐसा नाम या विशेषण लिखा और न तो उनके गुरु का नाम श्रीमणिरत्नसूरिजी लिखा और न तो श्रीजगच्चंद्रसूरिजी ने जावज्जीव आचाम्लतप किया लिखा और न तो संवत् १२८५ में अमुक राजा ने तपगच्छ नाम या तपगच्छबिरुद दिया लिखा तथा ३२ दिगंबर जैनाचार्यों को अमुक विवाद में जितने से अमुक नगर के अमुक राजा ने श्रीजगच्चंद्रसूरिजी को हीरला बिरुद दिया, यह भी नहीं लिखा है तथापि आप लोग अपनी तपगच्छ की पट्टावली से उक्त बातों को मानते हो तो श्रीसमवायांगसूत्र की टीका के अंत में (श्रीमत्सूरिजिनेश्वरस्य जयिनो दुर्पीयसां वाग्मिनां) इस श्रीअभयदेवसूरिजी के वाक्य से तथा अनेक शास्त्रसंमत खरतरगच्छ की पट्टावली के लेख से विदित होता है कि वाचाल और अहंकारी चैत्यवासियों को जितने से खरेतरे याने खरतर बिरुद धारक श्रीजिनेश्वरसूरिजी महाराज भूमंडल में प्रख्यात हुए, उनके शिष्य नवांगटीकाकार श्रीस्थंभन पार्श्वनाथ प्रतिमा प्रगटकर्त्ता श्रीअभयदेवसूरिजी महाराज हुए जिनसे खरतर नाम का गच्छ प्रतिष्ठा को प्राप्त हुआ, इन अपने पूर्वजों की लिखी हुई सत्य बातों को क्यों नहीं मानते हो ?

३ [प्रश्न] संवत् १२८५ वर्ष के पहिले रचे हुए किस ग्रंथ में श्रीजगच्चंद्रसूरिजी का बृहत् या बड़गच्छ वा वृद्धगच्छ लिखा है ?

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

४ [प्रश्न] धर्मसागर उपाध्याय के ग्रंथों में आगमविरुद्ध अनेक कदाग्रह वचनों को तथा द्वेष से परगच्छवालों की निंदा रूप कपोलकल्पित महामिथ्या कटु वचनों को उनके गुर्वादिक ने अपने रचे द्वादश जल्पपट्ट आदि ग्रंथों में जलशरण द्वारा मिथ्या ठहराये हैं या नहीं ? और उन मिथ्या वचनों को कोई माने वह गुरु-आज्ञा लोपी हो, ऐसा लिखा है या नहीं ?

इन उपर्युक्त प्रश्नों के उत्तर तपगच्छ के श्रीआनंदसागरजी सत्य प्रकाशित करें । इत्यलं किंबहुना ?

---

* छठा प्रश्न *

तपगच्छ के श्रीआनंदसागरजी ने स्वप्रतिज्ञापत्र में लिखा है कि—ईर्यापथिकी सामायिकोच्चारात्प्राक्कर्तव्या न वा ? अर्थात् नवमा सामायिक व्रत करने की विधि में करेमि भंते सामाइयं इत्यादि सामायिक दंडक उच्चरणे के पहिली ईरियावही श्रावक करें या नहीं ?

[उत्तर] इस विषय का निर्णय "आत्मभ्रमोच्छेदनभानु" ग्रंथ में संपूर्ण लिखा है । वास्ते उस ग्रंथ में देख लेना । क्योंकि श्रीआवश्यक सूत्र बृहत् टीका आदि अनेक ग्रंथों के प्रमाणों से नवमा सामायिक व्रत करने की विधि में पहिली करेमि भंते—सामायिक दंडक उच्चर के पीछे ईरियावही श्रावक करें, इसलिये शास्त्रकार महाराजों ने नवमा सामायिक व्रत में पहिली करेमि भंते पीछे ईरियावही यह जो विधि लिखी है उसमें तपगच्छवालों को शंका करनी वा अश्रद्धा रखनी सर्वथा अनुचित है । यदि तपगच्छ के श्रीआनंदसागरजी कहें कि श्रीमहानिशीथ-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

सूत्रादि में चैत्य वंदनादि विधि में पहिली ईरियावही करना लिखा है तो भी ईरियावही विना, चैत्यवंदनादि करते हैं और आहारादि लेने को जाना आना इत्यादि कृत्यों में साधु बेर बेर ईरियावही करे, उसको किये विना साधु अन्य कृत्य नहीं करे। ऐसा श्रीदशवैकालिक बृहत् टीका में लिखा है। तथा श्रीपौषध विधि प्रकरणादि ग्रंथों में पर्व दिनों में ग्यारहवें पौषध व्रत की विधि में पहिली ईरियावही करके श्रावक पौषध व्रत ग्रहण करे और दो घड़ी रात्रि या दिन शेष रहते चार वा आठपहर का ग्यारहवाँ पौषध व्रत ग्रहण किया हो तो चार या आठ पहर का पौषध सामायिक का काल दो घड़ी रात्रि शेष रहते संपूर्ण हो जाता है, इसीलिये वह ग्यारहवाँ पौषध व्रतधारी श्रावक रात्रि के पिछले पहर में निद्रा से उठके ईरियावहि पड़िक्कम के कुसुमिण दुस्सुमिण आदि काउसग्ग तथा चैत्यवंदनादि करें, वह मुहपत्ति पड़िलेके नवकार पूर्वक सामायिक सूत्र कह कर आदेश माँग के प्रतिक्रमण वेलापर्यंत सज्झाय ध्यान करे पीछे प्रतिक्रमण पड़िलेहणादि करे, यह ग्यारहवाँ पौषध व्रतधारी श्रावक ने चार वा आठ पहर से ऊपर ग्रहण की हुई नवीन सामायिक में पौषध के संबंध से ईरियावही करके करेमि भंते उस ग्यारहवें पौषध व्रतधारी को उच्चरणे की है, इत्यादि अनेक अन्य विषय संबंधी प्रमाणों से (प्रतिदिन) हमेशाँ नवमासामायिक व्रत की विधि में भी पहिली ईरियावही करके पीछे करेमि भंते उच्चरणी हम तपगच्छवाले मानते हैं तो निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर तपगच्छ के श्रीआनंदसागरजी सत्य सत्य प्रकाशित करें।

१ [प्रश्न] यह है कि श्रीआवश्यक सूत्र की बृहत् टीका में श्रावक का नवमा सामायिक व्रत की विधि में श्रीहरिभद्रसूरिजी महाराज ने लिखा है कि—

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

एयाए विहीए गंता तिविहेण णमिऊण साहुणो, पच्छा सामाइयं करेइ करेमि भंते सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चख्खामि जावनियमं पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणं मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि तस्स भंते पड़िक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसरामित्ति उच्चारिऊण पच्छा इरियावहियाए पड़िक्कमइ ।

अर्थ—उक्त विधि से साधु के पास जाकर श्रावक त्रिविध नमस्कार करके पीछे सामायिक करे उसमें करेमि भंते समाइयं इत्यादि नवमा सामायिक व्रत का दंडक पहिली उच्चर के पीछे इरियावहि को पड़िक्कमे यह श्रीहरिभद्रसूरिजी महाराज के वचन तपगच्छवाले मानते हैं या नहीं ?

२ [प्रश्न] यह है कि श्रावकधर्मप्रकरण ग्रंथ में श्रावक का नवमा सामायिक व्रत के अधिकार में लिखा है कि—

मूल—चैत्यालये १ स्वनिशांते, २ साधूनामंतिकेऽपि वा ३ ।
कार्यं पौषधशालायां, ४ श्राद्धैस्तत् विधिना सदा ॥१॥

टीका—चैत्यालये विधिचैत्ये १ स्वनिशांते स्वगृहे २ स्वगृहेपि विजनस्थाने इत्यर्थः साधुसमीपे ३ पोषो पुष्टिः ज्ञानादीनां धीयते अनेनेति पौषधं पर्वाऽनुष्ठानं उपलक्षणात्वात् सर्वधर्माऽनुष्ठानार्थं शालागृहं पौषधशाला तत्र वा ४ तत् सामायिकं कार्यं श्रावकैः सदा नोभयसंध्यमेवेत्यर्थः कथं विधिना खमासमणं दाउं इच्छाकारेण संदिस्सह भगवन् सामाइय

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

मुहपत्ति पड़िलेहेमित्ति भणिअ बीअ खमासमणपुव्वं पुत्ति पड़िलेहिअ खमासमणेण सामाइयं संदिसाविअ बीअ खमासमणपुव्वं सामाइयं ठामित्तिवुत्तं खमासमणदाणपुव्वं अद्धावणायगत्तो पंचमंगलं कड्ढित्ता—करेमि भंते सामाइयं इच्चाई सामाइयसूत्तं भणइ पच्छा इरियं पड़िक्कमइ इत्यादि ।

भावार्थ—श्रीजिनमंदिर में १, अपने घर में २, साधु के पास में ३ वा पौषधशाला में ४ श्रावक सदा नवमा सामायिक व्रत उपर्युक्त खमासमण आदि शुद्ध विधि से करे उसमें करेमि भंते सामाइयं इत्यादि सामायिक सूत्र कहे पीछे ईरियावही पड़िक्कमे, यह श्रावकधर्मप्रकरणग्रंथ के वचन तपगच्छवाले शुद्ध श्रद्धापूर्वक स्वीकार करते हैं या नहीं ?

३ [प्रश्न] यह है कि श्रीआवश्यकसूत्र लघुटीका में लिखा है कि शिक्षाव्रतेषु आद्यव्रतमाह सामाइअं नाम सावज्जजोगपरिवज्जणं निरवज्जजोगपड़िसेवणं च । इह श्रावको द्वेधा श्रीमान् दरिद्रश्च द्वावऽपि निरपायौ चैत्ये १ साधुसमीपे २ स्वगृहे ३ पौषधशालायां वा ४ सामायिकं प्रतिपद्येते—करेमि भंते सामाइअं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जावनियमं पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणं मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि तस्स भंते पड़िक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसरामित्ति पश्चादीर्यापथिकीं प्रतिक्रमतस्ततः स्वाध्यायं कुरुत इति ।

भावार्थ—श्रावक के १२ व्रतों में नवमा सामायिक दशवाँ देशावकाशिक ग्यारहवाँ पौषध बारहवाँ अतिथिसंविभाग इन चार

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

शिक्षाव्रतों में पहिला सामायिक व्रत का स्वरूप श्रीआवश्यक सूत्रकार श्रीमद्भद्रबाहुस्वामि चतुर्दशपूर्वधर श्रुतकेवली महाराज ने बतलाया है कि सामायिक नाम किसका है—सावद्य (पाप) योग का परिवर्जन (त्याग) और निरवद्य (पाप रहित) योग का प्रतिसेवन करना। टीकाकार कहते हैं कि यहाँ श्रावक दो प्रकार के हैं—एक श्रीमान्, दूसरा दरिद्र (१रिद्धिवंत २ अरिद्धिवंत), ये दोनों भी निर्विघ्नतावाले श्रावक जिनमंदिर में १ साधु के पास में २ अपने घर में ३ वा पौषधशाला में ४ नवमा सामायिक व्रत को स्वीकार करें। याने उपर्युक्त श्रीभद्रबाहुस्वामि के सावद्य योग का परिवर्जन इत्यादि वचनानुसार करेमि भंते सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि इत्यादि सामायिक दंडक को पहिली उच्चर के सावद्य योग को त्यागे (परिवर्जन करे) पीछे ईरियावही को उक्त दोनों श्रावक पड़िक्कमे बाद स्वाध्याय करें, यह शास्त्रकार महाराजों ने नवमा सामायिक व्रत का नाम लेकर सावद्य योग परिवर्जन रूप सामायिक की यथोचित विधि में पहिली करेमि भंते उच्चर के पीछे ईरियावही करना लिखा है, यह शास्त्रकार महाराजों की कही हुई उचित रीति को (समाचारि को) तपगच्छवाले अपनी शुद्ध श्रद्धा से यथार्थ परम सत्य मानते हैं कि अश्रद्धा से मिथ्या ?

४ [प्रश्न] यह है कि श्रीपूर्वाचार्यमहाराज विरचित श्रीआवश्यकचूर्णि में भी लिखा है कि—

एआए विहीए गंता तिविहेण साहुणो नमिऊण पच्छा साहु सक्खियं सामाइयं करेइ करेमि भंते सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जाव साहू पज्जुवासामित्ति काऊण [जइ चेइयाइं अत्थि तो पढमं वंदति] साहुसगासाओ रयहरणं

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

निसेज्जं वा मग्गति अह घरे तो से उवग्गहिअं रयहरणं अत्थि-तस्स असति वत्थस्स अंतेणं पमज्जइ पच्छा इरियावहियाए पड़िक्कमति पच्छा आलोएत्ता वंदति आयरियाई ।

भावार्थ—अपने घर में सामायिक ग्रहण की हो वह श्रावक सुमति गुप्ति आदि उक्त विधि से साधु के पास जावे, त्रिविध साधु को नमस्कार करके पीछे साधु साक्षिक सामायिक करें याने वह श्रावक फिर करेमि भंते सामायिकदंडक उच्चरे (जो चैत्य हों तो प्रथम चैत्य वंदन करे) साधु के पास रजोहरण वा आसन माँगे अथ घर में सामायिक करे तो अपना रक्खा हुआ रजोहरण (चरवला) हो और वह नहीं हो तो वस्त्र के अंत से प्रमार्जन करे । पीछे ईरियावही पड़िक्कमे पीछे आलोवे याने सात लाख पृथ्वीकाय आदि बोल के आचार्य आदि को वंदना करे । यह श्रीआवश्यकचूर्णि में साधुसाक्षिसे फिर सामायिक दंडक-उच्चरे । जो चैत्य हों तो प्रथम चैत्यवंदन करे पीछे ईरियावही करे । इसमें चैत्यवंदन समाचारि विशेष से नानात्व मालूम होता है । इस नानात्व में भी सामायिक दंडक उच्चरणे के पहिली ईरियावही करना नहीं लिखा है किंतु सामायिक दंडक उच्चरणे के पीछे ईरियावही करना लिखा है तो यह श्रीआवश्यकसूत्र चूर्णिकार तथा टीकाकार महाराजों के वचन तपगच्छवालों को मान्य हैं या नहीं ?

५ [प्रश्न] यह है कि श्रीपंचाशकटीका में श्रावक के १२ व्रतों में नवमा सामायिक व्रत की विधि में श्रीखरतरगच्छनायक नवांग-टीकाकार श्रीमद्अभयदेवसूरिजी महाराज ने लिखा है कि—

अनेन विधिना गत्वा त्रिविधेन साधून् नत्वा सामायिकं करोति करेमि भंते सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जाव

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

नियमं पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणमित्याद्युच्चारणातस्ततः ईर्यापथिकायाः प्रतिक्रमति पश्चादालोच्य वंदते आचार्यादीन् यथा रात्निकतया पुनरपि गुरुं वंदित्वा प्रत्युपेक्ष्य निविष्टः पृच्छति पठति वा एवं चैत्येष्वऽपि इत्यादि ।

भावार्थ—ऊपर की तरह जानना, इस पंचाशक टीकापाठ में नवांगटीकाकार महाराज ने पहिली करेमि भंते सामायिक दंडक उच्चर के पीछे इरियावही करना लिखा है, सो तपगच्छवाले वैसा करना मानते हैं या नहीं ?

६ [प्रश्न] यह है कि श्रीयशोदेव उपाध्यायजी महाराज ने नवपदप्रकरण-विवरण में लिखा है कि—

आगतः साधून् त्रिविधेन नमस्कृत्य तत्सान्निकं पुनः सामायिकं करोति—करेमि भंते सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चख्खामि जाव नियमं पज्जुवासामीत्यादिसूत्रमुच्चार्य तत ईर्यापथिकी प्रतिक्रामत्यागमनं चालोचयति तत आचार्यादीन् वंदते यथा रत्नाधिकतया अभिवंद्य सर्वसाधून् उपयुक्तः सन् उपविष्टः पृच्छति पठति वा पुस्तकवाचनादि करोति इत्यादि ।

भावार्थ—उपर्युक्त प्रमाणों की तरह स्पष्ट विदित होता है याने इस पाठ में भी साफ लिखा है कि पहिली करेमि भंते सामायिकदंडक उच्चर के पीछे इरियावही करना,—यह शास्त्रकारों की आज्ञा तपगच्छवाले मानते हैं या नहीं ?

७ [प्रश्न] यह है कि संवत् ११८३ में चंद्रगच्छ के श्री-विजयसिंह आचार्य महाराज कृत श्रावक प्रतिक्रमण चूर्णि में लिखा है कि—

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

वंदिऊणाय गुरुणो छोभावंदणेणं संदिसाविअ सामाइय दंडगमणुकड्ढइ जहा करेमि भंते सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चख्खामि जाव नियमं पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणं मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि तस्स भंते पड़िक्कमामि निंदामि गिरिहामि अप्पाणं वोसिरामि तओ इरियावहियं पड़िक्कमिउं आगमणं आलोएइ पच्छा जहा जेठं साहुणो वंदिऊण पढ़इ सुणइ वा ॥

भावार्थ—गुरु महाराज को छोभावंदना से नमस्कार करके आज्ञा माग के करेमि भंते सामायिक दंडक उच्चरे पीछे इरियावही पड़िक्कमे इत्यादि ये शास्त्रकारों के वचन तपगच्छवालों को मान्य हैं या नहीं ?

८ [प्रश्न] यह है कि श्रीहेमाचार्य महाराज ने श्रीयोगशास्त्र की टीका में लिखा है कि—

एवं कृतसामायिक ईर्यापथिकायाः प्रतिक्रामति पश्चादागमनमालोच्य यथा ज्येष्ठमाचार्यादीन् वंदते ।

भावार्थ—उक्त रीति से सामायिक दंडक उच्चर कर पीछे इरियावही करे इत्यादि कथन शास्त्र-संमत है, सो तपगच्छवाले सत्य मानते हैं या नहीं ?

९ [प्रश्न] यह है कि श्रीजगच्चंद्रसूरिजी के शिष्य श्रीदेवेंद्रसूरिजी ने श्रावक दिन कृत्य सूत्र टीका में लिखा है कि—

मूल—काऊणाय सामाइयं, इरियं पडिक्कमिय गमणमालोए ।
वंदित्तु सूरिमाई, सज्झायावस्सयं कुणइ ॥ ३० ॥

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

टीका—श्रावकेण गृहे सामायिकं कृतं ततोऽसौ साधु-समीपे गत्वा किं करोति इत्याह काऊण० साधुसाक्षिकं पुनः सामायिकं कृत्वा ईर्यां प्रतिक्रम्यागमनमालोचयेत् तत आचार्या-दीन् वंदित्वा स्वाध्यायं काले चाऽऽवश्यकं करोति ॥ ३० ॥

भावार्थ—श्रावक ने घर में सामायिक किया है पीछे वह श्रावक साधु के पास जाके क्या करे ? सो मूलसूत्रकार कहते हैं कि साधु साक्षिक फिर करेमि भंते सामायिक दंडक उच्चर के पीछे इरियावही पडिक्कम के आगमन आलोचे बाद आचार्य आदि को वंदना करके स्वाध्याय और कालवेला में आवश्यक (प्रतिक्रमण) करे। यहाँ पर मूलसूत्र गाथा तथा टीका इन दोनों में सामायिक उच्चरणे के पीछे इरियावही करना लिखा है पहिले नहीं, तो तपगच्छवालों को अपने पूर्वजों की इस उक्त आज्ञा का पालन करना उचित है या नहीं ?

१० [प्रश्न] यह है कि तपगच्छ के श्रीहीरविजयसूरिजी के संतानीये श्रीमानविजयजी उपाध्याय कृत तथा श्रीयशोविजयजी उपाध्याय संशोधित श्रीधर्मसंग्रहप्रकरण ग्रंथ की टीका में—आवश्यकसूत्रमपि सामायिअं नाम सावज्जजोगपरिवज्जणं णिर-वज्जजोगपडिसेवणं च इत्यादि अधिकार में लिखा है कि—

साध्वाश्रयं गत्वा साधून् नमस्कृत्य सामायिकं करोति तत्सूत्रं यथा करेमि भंते सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जाव साहू पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणं मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि तस्स भंते पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामित्ति एवं कृतसामायिक ईर्य्यापिथिक्याः

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

प्रतिक्रामति पश्चादागमनमालोच्य यथा ज्येष्ठमाचार्यादीन् वंदते पुनरपि गुरुं वंदित्वा प्रत्युपेक्षितासने निविष्टः शृणोति पठति पृच्छति वा इत्यादि।

भावार्थ—साधु के उपाश्रय जा के साधु को नमस्कार करके सामायिअं नाम सावज्जजोगपरिवज्जणं इत्यादि आवश्यक सूत्र के अनुसार पहिली सावद्य योग परिवर्जन (त्यागने) रूप करेमि भंते सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चख्खामि इत्यदि सामायिक दंडकउच्चरे एवं कृतसामायिक याने इस तरह पहिली सामायिक दंडक उच्चर कर श्रावक पीछे इरियावही को पड़िक्कमे, पीछे आगमन आलोच के यथा ज्येष्ठ आचार्य आदि को वंदना करे, फिर गुरु महाराज को वंदना करके प्रमार्जित आसन पर बैठा हुआ सुने, पठन करे वा पूछे इस तरह उपर्युक्त आगम-वचनों के अनुसार और युक्ति के अनुसार तथा गुरु-परंपरा के अनुसार तपगच्छ के उपर्युक्त पूर्वजों ने अपने किये हुए ग्रंथों में नवमा सामायिक व्रत की विधि में श्रावक को सावद्य योग त्यागने रूप सामायिक दंडक पहिली उच्चर के निर्वद्य योग प्रतिसेवनरूप पीछे इरियावही करना, यह साफ़ ठीक लिखा है तो तपगच्छ-वालों को इस आज्ञा का भंग करना उचित है या अनुचित ?

११ [प्रश्न] श्रीमहानिशीथसूत्र के वचन से ईरियावही पड़िक्कमे विना चैत्यवंदन स्वाध्याय ध्यानादि नहीं करना मानते हो तो उपर्युक्त श्रीआवश्यकसूत्र बृहट्टीका आदि के वचनों से सावद्ययोग वर्जने के लिये पहिली करेमि भंते सामाइयं सावज्जं जोगं पच्चख्खामि इत्यादि सामायिक दंडक उच्चर के पीछे ईरियावही करना, यह शास्त्रवचन प्रमाण क्यों नहीं मानते हो ?

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

१२ [प्रश्न] उक्त शास्त्रों के वचनानुसार पहिली सामायिक दंडक उच्चर के पीछे ईरियावही करते हैं तथापि कहते हो कि पहिली ईरियावही किये विना किंचित् भी धर्मकृत्य शुद्ध नहीं होता है, तो जिनमंदिर में चैत्यवंदन और साधु को वंदना करना तथा पच्चख्खान, दान, नवकार मंत्र का जाप, स्वाध्याय (पठन-पाठन), व्याख्यान, पंचपरमेष्ठी ध्यान इत्यादि भावयुक्त धर्मकृत्य ईरियावही किये विना करते हो सो शुद्ध मानते हो या अशुद्ध ?

१३ [प्रश्न] श्रीदेवेंद्रसूरिजी के शिष्य महोपाध्याय श्रीधर्म-कीर्त्तिजी ने संघाचार नाम की चैत्यवंदनभाष्य की टीका में लिखा है कि—

वृद्धाः पुनरेवमाहुः उत्कृष्टा चैत्यवंदना ईर्यापतिक्रमणपुरस्सरैव कार्या अन्यथापि जघन्या मध्यमेति ततः सामान्योक्तावऽपि यो विधिर्यत्र नामग्राहं प्रोक्तः स तत्र कार्य इतितत्त्वं ।

भावार्थ—वृद्ध पूर्वाचार्य महाराजों ने ऐसा लिखा है कि उत्कृष्ट चैत्यवंदना ईरियावही पहिली करके करने की है और ईरियावही किये विना भी जघन्य तथा मध्यम चैत्यवंदना की जाती है इस लिये सामान्य कथन में भी जो विधि जहाँ नाम ले के कही हो वह विधि वहाँ करना, यह तत्त्व बात समझना तो श्रीआवश्यकसूत्र बृहत्टीका आदि अनेक ग्रंथों में अनेक वृद्ध पूर्वाचार्य महाराजों ने नवमा सामायिक व्रत का नाम ले के उसकी विधि में पहिली करेमि भंते सामायिक दंडक उच्चर के पीछे ईरियावही करना लिखा है, वास्ते इस विधि को करना तपगच्छ-वाले क्यों नहीं स्वीकार करते हैं ?

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

१४ [प्रश्न] सामाइयंमिउकए समणो इव सावओ हवइ अर्थात् दो घड़ी सामायिक में रहा हुआ श्रावक साधु तुल्य होता है, क्योंकि साधु करेमि भंते सामायिक दंडक से त्रिविध त्रिविध जावज्जीव की सामायिक बरोबर ख्याल रहने के लिये तीन बेर उच्चरता है और श्रावक भी उसी करेमि भंते सामायिक दंडक से दुविध त्रिविध जाव नियम की सामायिक बरोबर ख्याल रहने के लिये तीन बेर उच्चरता है तो इससे तपगच्छवाले क्यों भड़कते हैं ?

१५ [प्रश्न] रात्रि को एक या दो पहर सोने की संथारा पौरसी में साधु और पौषधव्रतधारी श्रावक अच्छी तरह ख्याल रहने के लिये तीन बेर करेमि भंते सामायिक दंडक उच्चरते हैं तो इसी तरह दो घड़ी की सामायिक करनेवाला श्रावक अच्छी तरह ख्याल रहने के लिये तीन बेर करेमि भंते सामायिक दंडक उच्चरता है सो तपगच्छ वाले उसको हितकारी क्यों नहीं मानते हैं ?

१६ [प्रश्न] यदि कहा जाय कि एक या दो पहर की संथारा पौरसी के विषे में तीन बेर करेमि भंते सामायिक दंडक उच्चरते हैं तथा साधु की सर्व विरति सामायिक विषे में तीन बेर करेमि भंते सामायिक दंडक उच्चराते हैं, इसको और विषय मानकर श्रावक की देशविरति सामायिक में तीन बेर करेमि भंते सामायिक दंडक उच्चराणे का परिश्रम वा आग्रह नहीं करते हैं तो श्रावक का देशविरति नवमा सामायिक व्रत में बड़े आग्रह से श्रीमहानिशीथ सूत्र का प्रमाण दिखाते हो सो तो इरियावही किये विना उत्कृष्ट चैत्यवंदनादि करना नहीं कल्पे, इस विषय का पाठ है, उसमें सामायिक का नाम या गंध भी नहीं है तो फिर इससे क्या आपकी सिद्धि हो सकती है, नहीं ? क्योंकि जहाँ जैसा विषय होता है वहाँ ग्रंथकार महाराज वैसा खुलासा

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

करके दिखाते हैं वास्ते श्रावक के नवमा सामायिक व्रत के विषय वाले उपर्युक्त अनेक पाठों में किसी भी प्राचीन आचार्य महाराजों ने पहिली इरियावहि करके पीछे करेमि भंते सामायिक दंडक उच्चरणा यह आपकी सिद्धि का खुलासा नहीं दिखाया, इसका क्या कारण ? जिससे आपको और विषय के पाठों को तथा मनोकल्पित पाठ और कल्पित अर्थ को सामायिक विषय में झूठी कल्पना करके दिखाने का प्रयास लेना पड़ता है सो उक्त शास्त्र पाठों से विरुद्ध आप लोगों का यह कदाग्रह है या नहीं ?

१७ [प्रश्न] साधु की त्रिविध त्रिविध सर्वविरति सामायिक में तीन बेर करेमि भंते सामायिक दंडक उच्चरणे का पाठ श्रावक की दुविध त्रिविध देशविरति सामायिक में तीन बेर उच्चरणा संगत नहीं मानते हो तो श्रीदशवैकालिक सूत्र की बृहत् टीका में साधु के आहारादि कृत्यों के विषय में इरियावही करना लिखा है, उस पाठ को बालजीवों को देखा कर अपनी कपोलकल्पना से असंगत मंतव्य क्यों बतलाते हो कि इस पाठ से श्रावक के नवमा सामायिक व्रत के विषय में पहिली इरियावहि करना और पीछे करेमि भंते सामायिक दंडक उच्चरना ?

१८ [प्रश्न] श्रावक के ५ अणुव्रत ३ गुणव्रतों में हिंसा झूठ चोरी कुशीलादि सावद्य (पाप) का त्याग रूप दंडक श्रावक को ख्याल तथा हित के लिये तीन तीन बेर उच्चराते हो तो इसी तरह सामायिक देशावकाशिक पौषध इन शिक्षा व्रतों में भी हिंसा झूठ चोरी कुशीलादि सावद्य (पाप) का विशेष त्याग रूप दंडक श्रावक को ख्याल तथा हित के लिये तीन तीन बेर उच्चराणे में कौन सी दोषापत्ति मानते हो ?

१६ [प्रश्न] जावज्जीव के सावद्य (पाप) योग तीन वेर करेमि भंते सामायिक दंडक उच्चर के त्यागने तो जाव नियम के

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

सावद्य (पाप) योग तीन बेर करेमि भंते सामायिक दंडक नहीं उच्चर के नहीं त्यागने यह मंतव्य उचित है या अनुचित ?

२० [प्रश्न] श्रावक को दो घड़ी की सामायिक में एक बार सामायिक दंडक उच्चराणा मानते हो तीन बेर नहीं तो श्रावक अपने घर में सामायिक दंडक उच्चर के गुरु के पास आकर फिर करेमि भंते सामायिक दंडक उच्चर के दो घड़ी के दैवसिक प्रतिक्रमण में तीन वेर फिर उसी करेमि भंते सामायिक दंडक का उच्चारण करता है और दो घंटे का पाक्षिक प्रतिक्रमण में ६ बेर उसी करेमि भंते सामायिक दंडक का उच्चारण करता है एवं एक या दो पहर सुने की संथारा पौरसी में पौषधव्रतधारी श्रावक तीन बेर उसी करेमि भंते सामायिक दंडक को उच्चरते हैं, इसी तरह दो घड़ी का नवमा सामायिक व्रत में भी तीन बेर उसी करेमि भंते सामायिक दंडक को श्रावक उच्चरते हैं तो इसमें कौन सी दोषापत्ति मानते हो ?

२१ [प्रश्न] यदि कहा जाय कि सामायिक सूत्र में करेमि भंते सामाइयं यह द्वितीया का एक वचन है, वास्ते साधु या श्रावक को एक बेर करेमि भंते सामायिक दंडक उच्चरणा उचित है, तीन बेर नहीं तो श्रीओघनिर्युक्ति में—सामाइयं उभयकालप-ड़िलेहा इस निर्युक्ति पाठ में भी सामाइयं यह सामान्यपने से जाति में एक वचन है तथापि टीकाकार श्रीद्रोणाचार्य महाराज ने उसकी टीका में खुलासा लिखा है कि—सामायिकं वारत्रयमाकृ-ष्य स्वपीति और श्रीव्यवहारभाष्य श्रीनिशीथचूर्णि-समाचारी आदि शास्त्रकार महाराजों ने सर्व विरति देश विरति सामायिक व्रत उच्चरने के लिये लिखा है कि—सामाइयं तिगुणं—सामाइअं तिखुतो कड्ढइ—सामाइयदंडगो नवकारो य वारतिगं भणिजइ

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अर्थात् तीन बेर सामायिक दंडक कहे तो आप लोक टीका भाष्य चूर्णि समाचारी विरुद्ध निषेध क्यों करते हो कि तीन बेर सामायिक दंडक नहीं उच्चरणा ? अथवा तुम्हारे मताभिनिवेश से एक बेर सामायिक दंडक उच्चरने से आप के मंतव्य की सिद्धि हो जाती है तो फिर श्रावक दो घड़ी प्रतिक्रमण संबंधी सामायिक में तथा पौषध संबंधी एक पहर की संथारा पौरसी में तीन बेर करेमि भंते सामायिक दंडक को क्यों बोलते हैं ? और आप भी अपनी सर्व विरति सामायिक में तथा एक पहर की संथारा पौरसी में तीन बेर करेमि भंते सामायिक दंडक क्यों उच्चारण करते हो ?

इन उपर्युक्त २१ प्रश्नों के २१ उत्तर तपगच्छ के श्रीआनंद-सागरजी अलग अलग सत्य प्रकाशित करें। इत्यलं विस्तरेण।

---

* सातवाँ प्रश्न *

तपगच्छ के श्रीआनन्दसागरजी ने स्वप्रतिज्ञापत्र में लिखा है कि "स्त्रिया जिनपूजा कार्या न वा" अर्थात् स्त्री को श्रीजिनप्रतिमा की पूजा करनी या नहीं ?

[उत्तर] इस विषय में ढूँढ़ियें की तरह श्रीआनंदसागरजी को शंका करनी अनुचित है, क्योंकि शास्त्रों की संमति से श्री-जिनप्रतिमा की पूजा करनी और आशातनादि होने के कारणों से नहीं करनी, यह दोनों मंतव्य मानने पड़ेंगे। देखिये कि श्रीतीर्थंकर महाराज की प्रतिमा तीर्थंकर तुल्य मानी है इसी लिये श्रीजिन-प्रतिमा की पूजा हित सुख मोक्ष आदि फल की हेतु है और वह

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

श्रीजिनप्रतिमा की पूजा श्रीज्ञाताधर्मकथा सूत्र आदि शास्त्रों में द्रौपदी आदि ने करी लिखी है। वास्ते पुरुषों को तथा स्त्रियों को श्रीजिनप्रतिमा की पूजा करनी ऐसा श्रीगणधर आदि महाराजों का उपदेश है तथा श्रीगणधर महाराजों ने जिस तरह श्रीठाणांग सूत्र आदि ग्रंथों में—(अट्ठिमांससोणिए इत्यादि) अर्थात् हड्डी, मांस, रुधिरादि से श्रीजिनवाणी की आशातना नहीं होने के लिये सूत्र अध्ययन (पठन पाठन) नहीं करना लिखा है, इसी तरह श्रीप्रवचनसारोद्धार आदि अनेक ग्रंथों में (खेलं इत्यादि) अर्थात् नाक संबंधी मल इत्यादि से तथा (लोहियं इत्यादि) अर्थात् शरीर संबंधी (खून) रुधिरादि से श्रीजिनप्रतिमा की आशातना नहीं करना लिखा है वास्ते कोई पुरुष वा स्त्री के शरीर द्वारा अकस्मात् (खून) रुधिरादि झरते हैं तो आशातनादि नहीं होने के कारणों से श्रीजिनप्रतिमा की चंदनादि विलेपन द्वारा अंग पूजा नहीं करे, इसी लिये श्रीमत् बृहत् खरतरगच्छनायक युगप्रधान दादाजी श्रीजिनदत्तसूरिजी महाराज ने इस दुस्समकाल में श्रीजिनप्रतिमा की चंदनविलेपनादि से अंग पूजा करती हुई तरुण स्त्रियों को अकाल वेला प्रकट हुआ ऋतुधर्म उसकी बहुत मलिनता के दोष से याने पूजा समय ऋतुधर्म वाली हुई उस महामलिन तरुण स्त्री का हाथ के स्पर्श से अतिशयवाली तथा श्रीजिन-शासन की उन्नति करनेवाली चमत्कारी देवाधिष्ठित श्री-मूलनायक जिनप्रतिमा की आशातना और उसके अधि-ष्ठाता देव का लोप नहीं होने के लिये इस विशेषलाभ को दीर्घ दृष्टि से विचार कर तरुण अवस्था वाली स्त्री को श्रीमूलनायक जिनप्रतिमा की चंदनादि विलेपन द्वारा केवल अंगपूजा नहीं करना उच्छूत्रपदोद्घाटनकुलक में लिखा है तथा विधिविचारसार कुलक में भी लिखा है कि—

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

सागारमणागारं, ठवणाकप्पं वयंति मुणिपवरा ।
तत्थ पढमं जिणाणं, महामुणीणं च पडिरूवं ॥ १ ॥

भावार्थ—साकार अनाकार रूप स्थापना कल्पप्रवर मुनियों ने कहा है उसमें प्रथम साकार स्थापना वह है कि श्रीजिनके तथा महामुनि के प्रतिरूप (सदृश-प्रतिमा) हो ॥ १ ॥

तं पुण मप्पडिहेरं, अपडिहेरं च मूलजिणबिंबं ।
पूइज्जइ पुरिसेहिं, न इत्थिआए असुइभावा ॥ २ ॥

भावार्थ—वह पुन प्रातिहार्य सहित तथा प्रातिहार्य रहित श्रीमूलनायक जिनप्रतिमा को पुरुष पूजे स्त्री अशुचिवाली नहीं पूजे ॥ २ ॥

काले सुइभूएणं, विसिठपुप्फाइहिं विहिणाउ ।
सारथुइथुत्तिगुरुई, जिणपूआ होइ कायव्वा ॥ ३ ॥

भावार्थ—कालवेला ऋतुधर्म आवे वह स्त्री (शुचि) पवित्र होके विशेष श्रेष्ठ पुष्पादि (धूप दीप अक्षत नैवेद्य फल) करके विधि से द्रव्य पूजा और सार स्तुति थुइगित से श्रीजिनभाव पूजा करती हैं ॥ ३ ॥

पुरिसेणं बुद्धिमया, सुहबुद्धि भावओ गणितेणं ।
जत्तेण होइयव्वं, सुहाणुबंधप्पहाणेणं ॥ ४ ॥

भावार्थ—शुभानुबंध करके प्रधान बुद्धिमान् पुरुष शुभ बुद्धि को भाव से भावता हुआ पूजा में यत्नवाला होय ॥ ४ ॥

संभवइ अकालेवि हु, कुसुमं महिलाणं तेण देवाणं ।
पूआए अहिगारो, न उहउ होइ सव्वुत्तो ॥ ५ ॥

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भावार्थ—अकालवेला में भी याने स्त्री जिनप्रतिमा की पूजा करती हैं उस समय में भी उस स्त्री को ऋतुधर्म होता है उसीलिये श्रीजिनदेव की पूजा करने में उन ऋतुधर्म आनेवाली तरुण स्त्रियों को अधिकार युक्तियुक्त नहीं है ॥ ५ ॥

लोगुत्तमदेवाणं, समच्चणे समुचिओ इहं नेउ ।
सुइगुण जिठत्तणओ, लोए लोउत्तरे सूरीसेहिं ॥ ६ ॥

भावार्थ—इहाँ लोकोत्तम श्रीजिनदेव का (समर्चन) पूजन उसमें समुचित (शुचि गुण) पवित्र गुण ज्येष्ठपने से लोक में और लोकोत्तर जिनधर्म में (सूरीश) गणधर महाराजों ने कहा जानना ॥ ६ ॥

न छिवंति जहा देहं, उसरणभावं जिणवरिंदाणं ।
तह तप्पडिमंपि सयं, पूअंति न जुव्वनारीओ ॥ ७ ॥

भावार्थ—जैसे अशुद्ध शरीर को धारण करनेवाली ऋतुवंती स्त्री अन्य वस्तु को नहीं छूती है वैसे श्रीजिनप्रतिमा को भी अपने हाथ से नहीं छूती है, इसी कारण से जवान स्त्रियाँ पूजा नहीं करती हैं याने श्रीजिनप्रतिमा की पूजा करती हुई तरुण स्त्री को अकालवेला ऋतुधर्म रुधिर पात (खूँन का झरना) होता है उसीलिये तरुण अवस्थावाली स्त्री श्रीमूलनायक जिन बिंब (प्रतिमा) की अपने हाथ से चंदनादि विलेपन द्वारा केवल अंगपूजा नहीं करें । यह श्रीजिनदत्तसूरिजी महाराज ने लिखा है । परंतु बाल तथा वृद्ध अवस्थावाली स्त्रियों को श्रीजिनप्रतिमा की अंगपूजा का निषेध नहीं लिखा है और तरुण स्त्री को भी सर्व प्रकार से श्रीमूलनायक जिनप्रतिमा की पूजा का निषेध नहीं किया है । क्योंकि तरुण स्त्री को श्रीमूलनायक जिनप्रतिमा की

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

सुगंधि धूप पूजा १ अक्षत पूजा २ कुसुम प्रकर पूजा ३ दीपक पूजा ४ नैवेद्य पूजा ५ फल पूजा ६ गीत पूजा ७ नाट्यादि पूजा ८ करने के बारे में उक्त सूरिजी ने निषेध नहीं लिखा है, केवल अंगपूजा का निषेध लिखा है, सो तो श्रीपूर्वाचार्य महाराज ने भी १८ गाथा प्रमाण चैत्यवंदन उसकी टीका में तरुण स्त्रियों को श्रीमूलनायक जिनप्रतिमा के चरण आदि अंग को स्पर्श करना निषेध लिखा है। क्योंकि इस काल में श्रीसिद्धाचलजी आदि तीर्थ पर भी श्रीमूलनायक जिनप्रतिमा की चंदन विलेपनादि से अंग-पूजा करती हुई कई स्त्रियों को अकालवेला अकस्मात् महत्पाप बंधन रूप महामलिन ऋतुधर्म आ जाता है। यह बात बहुत लोगों को मालूम है, तो उक्त उचित कथन को कौन बुद्धिमान् सर्वथा अनुचित कहेगा ? देखिये श्रावक भीमसीमाणक ने सर्व लोकों के हित के लिये छाप कर प्रसिद्ध की हुई "पुष्पवती विचार" नाम की पुस्तक में लिखा है कि—

आ जगतमां समस्त प्राणीमात्र ने त्राणभूत शरण भूत आ भव तथा पर भवमां हितकारी सुखकारी कल्याणकारी ने मंगलकारी एवां त्रण तत्त्व छे तेनां नाम कहे छे एक तो देव श्रीअरिहंतजी बीजु गुरुसुसाधु तथा त्रीजो धर्म ते केवली भाषित ए त्रण तत्त्व छे तेने आराधवानुं मुख्य कारण अना-शातना छे (आशातना नहीं करवी) अने एने विराधवानुं मुख्य कारण आशातना छे ते आशातनो पण विशेषेंकरी अशुचि-पणा थकी थाय छे इत्यादि तथा समस्त अशुचिमां महोटी अशुचि अने समस्त आशातनाओमां शिरोमणि भूत वली सर्व पाप बंधननां कारणोमां महत् पापोपार्जनकरवानुं मुख्य

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

कारण एतो एक स्त्रिओं ने जे ऋतुप्राप्त थाय छे अर्थात् जे पुष्पवती केहेवाय छे एटले स्त्रियों ने अटकाव अथवा कोरें-बेसवानुं थाय छे ते ने लोकोक्तियें ऋतुधर्म कहे छे ते ऋतु धर्म यथार्थपणे न पालवा विषेनुं (सर्व पाप बंधननां कारणोमां महत् पापोपार्जनकरवानुं मुख्य कारण) छे इत्यादि ।

तथा आ ग्रंथमां करेला उपदेश प्रमाणें जे पुष्पवती स्त्रियो पोतें प्रवर्तशे बीजा ने प्रवर्तावशे तथा प्रवर्तनार ने सहाय आपशे तेने अत्यंत लाभ थशे अने तेने परंपराए मोक्ष सुखनी प्राप्ति पण अवश्य थशे—जे प्राणी आ ग्रंथमां करेला उपदेश थी विपरीत प्रवृत्ति करसे अथवा ए वातमां शंका कांक्षा करशे ते प्राणीनी लक्ष्मी तथा बुद्धिनो आ भवमां नाश थशे अने सम्यक्त्व तो तेमां होयज क्यांथी अर्थात् नज होय तेना घरना अधिष्ठायिक देवो तेने मुकीजशे अने ते जीव मिथ्या दृष्टि अनंत संसारी दुराचारी तथा कदाग्रही जाणवो केमके एम करया थकी देव गुरु तथा धर्मनी महोटी आशातना थायछे ते वात आ ग्रंथ वांचवा थकी विवेकीजनोना ध्यानमां तरत आवशे ।

इत्यादि लिख कर तपगच्छवालों की बनाई हुई ७० गाथा की ऋतुवंती स्त्री की सज्जाय और १८ गाथा की छोतिभास तथा अंचलगच्छवालों की करी हुई ३३ गाथा की सूतक की सज्जाय तथा ऋतुवंती स्त्री के अधिकार संबंधी सिद्धांतोक्त ६ गाथाओं यह चार ग्रंथ भेले छपवाये हैं, उनमें विशेषता से ऋतुवंती स्त्री

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

को दूसरे वस्त्र आदि नहीं छूने तथा पुस्तक श्रीजिनप्रतिमा को नहीं छूना पूजा दर्शन इत्यादि बहुत कृत्यो का निषेध लिखा है और अनेक दोष दुःख दंड लिखे हैं, देखिये उस पुष्पवती विचार नाम की पुस्तक में तपगच्छवालों की करी हुई सज्झाय में लिखा है कि—

ऋतुवंती नारियो परिहरे रे, बीजे वस्त्रे न अडके ।
सांज्जे रात्रे नारी मत फरो रे, मत बेसजो तडके ॥ १ ॥
मत भालवी नार मालनी रे, छांडवा धर्म ठाम ।
प्रभु दर्शन पूजा सद्गुरु रे, वांदवा तजो नाम ॥ २ ॥
पडिक्कमणुं पोसह सामायिक रे, देव वंदन माला ।
जल संघने रथजातरा रे, दर्शन दोष ठाला ॥ ३ ॥
रास वखाण धर्म कथा रे, व्रत पच्चख्खाण मेलो ।
स्तवन सज्झाय रास गहुंली रे, धर्मशास्त्र म खेलो ॥४॥
लखणुं लखे नहीं हाथ शुं रे, न करे धर्मचर्चा ।
धूपदीवो गोत्रज्जारणा रे, नहीं पूजा ने अर्चा ॥ ५ ॥
संघ जिमण प्रभावना रे, हाथे दे जो म लेजो ।
बलिदान पूजा प्रतिष्ठानुं रे, मत रांधीने देजो ॥ ६ ॥
पडिलाभे नहीं साधु साधवी रे, वस्त्र पात्र अनुपान ।
रांक-ब्राह्मणने हाथे आपे नही रे, दाणा लोटने दान ॥१२॥
ऋतुवंती हाथे जल भरी रे, देरा सरे जो आवे ।
समकित बीज पामे नहीं रे, फल नारकीनां पावे ॥२५॥
ऋतुवंती यात्राए चालतां रे, मत बेशजो गाडे ।
संघ तीर्थ फरस्यां थकांरे, पडशो पातल खाडे ॥२८॥

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

दर्शन पूजा दिन सातमे रे, जिन भक्ति करवी ।
व्रत पच्चख्खाण वखाण सुणोरे, पुण्य पालखी भरवी ३१॥
वेद पुरान कुरान मां रे, श्रीसिद्धांत मां भांख्युं ।
ऋतुवंती दोष घणो कह्यो रे, पंचांगे पण दाख्युं ॥५४॥
पेहले दाहाडे चांडालिणी कही रे, ब्रह्मघातक बीजे ।
धोबण त्रीजे चोथे दिवसे रे, शुद्धनारी वंदीजे ॥ ५५ ॥
ऋतुवंतीनु मुख देखतां रे, एक आंबिल दोष ।
बातडी करतां रागनी रे, पांच आंबिल पोष ॥ ५७ ॥
ऋतुवंती आसने बेसतां रे, सात आंबिल साचां ।
छठ्ठबार तास भाणे जम्यारे, नवगढ़ होये काचा ॥५८॥
ऋतुवंती नारीने आभडयां रे, छठ्ठनुं पाप लागे ।
वस्तु देतां लेतां अठ्ठमनोरे, कहो केम दोष भागे ॥५९॥
खाधुं भोजन तें नारी हाथनुंरे, भव लाखनुं पाप ।
भोग जोग नव लाखनुंरे, वीर बोले जवाप ॥ ६० ॥
ऋतुवंती खातां भोजन वध्युंरे, ढोर नें लावी नाखे ।
भव बार भुंडा करवा पडेरे, चंद्रशास्त्रने साखे ॥ ६२ ॥
रजस्वला वहाणे समुद्रमां रे, बेसतां वाहण डोले ।
भांगे कां लागे तोफानमां रे, मालवामें कां बोले ॥ ६३ ॥
लाख भवजाण अजाणमां रे, लघुवड भवआठ ।
भव लाखने वाणु घातमां रे, एम शास्त्रनो पाठ ॥ ६४ ॥
कमलाराणी प्रभु वांदतां रे, बार लाख भव कीधा ।
मालण फूल अटकावमां रे, लाख भव फल लीधां ॥६५॥

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

इसी तरह पुष्पवतीविचार नामक पुस्तक में छपी हुई छोतीभास में भी लिखा है कि—

छोती मूर्ति स्त्री धर्मिणी जाणो, तेहनो भय घणो आणो रे।
जेहनो दोष दीसे निज नयणे, वली कह्यो जिन वयणे रे॥ छो०
दीठे अंध होय नेत्र रोगी, षंढ होये संभोगी रे।
गंधे अन्नादिक कश्मल थाये, पापडी पडीधावलाय रे॥ छो०
बेडी बूडे जेहने संगें, जावा रंग उरंगे रे।
स्नान जलें वेल वृक्ष सुकाये, फल फूल नवि थाये रे॥ छो०
एम जाणी बीजे घरे राखो, तेहशुं भाष म भासो रे।
वस्तुवानी आभड़वा न दीजे, दूरथकांज रहीजे रे॥ छो०
एम न राखे जे नर निज गोरी, तेह पाप रथ धोरी रे।
एम न रहे जे नारी असारी, ते पामे दुःख भारी रे॥ छो०
शाकिनी जेम कुटंबने खाये, नरकमांहे ते जाय रे।
दुःख देखे ते त्यां अतिघणां, छेदादिक वधबंधतणां रे॥ छो०
सापिणी वाघणी रीछणी सिंहणी, श्यालिणी सुणी होई कागणी रे
अशुद्ध योनिमां पछी दुःख पामे, भवोभव पातक ठामें रे॥ छो०

पुष्पवतीविचार नामक पुस्तक में अंचलगच्छ वालों की करी हुई सूतक की सज्झाय है उसमें भी लिखा है कि—

जिनपड़िमा अंग पूजासार, न करे ऋतुवंती जे नार।
एम चर्चरीग्रंथमांहे विचार, ए परमारथ जाणो सार॥

पुष्पवतीविचार नाम की पुस्तक के पत्र २२ तथा २३ में लिखा है कि—

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अथ रजस्वला (ऋतुवंती) स्त्री अधिकारनी सिद्धांतोक्त गाथा प्रारंभ—

जा पुप्फपवहं जाणीउणा, न हु संका करेइ नियचित्ते ।
छिव्वइ अ भंड़गाइ, तथ्थ य दोसा बहू हुंति ॥ १ ॥

अर्थ—जे पुष्पवती (ऋतुधर्मवाली) स्त्री जाणीकरीने पोताना चित्तने विषे शंकाय नहीं हांड़लादिक ठामने आभड़े (छुए) त्यां तेने घणा महोटा दोष लागे ॥ १ ॥

लच्छी नासइ दूरं, रोगायं तह वहंति अणुवरयं ।
गियदेव य मुच्चंति, तं गेहं जे न वज्जंति ॥ २ ॥

अर्थ—तेनी लक्ष्मी दूरनाशी जाय तथा रोग आतंक (पीड़ा) विषम अनिवारक थाय घरना अधिष्ठायिक देव तेनुं घरमूकी आपे जे ऋतु धर्म थी आशातना नहीं वर्जे तेने पूर्वोक्त वानां थाय ॥ २ ॥

जइ कहवि अणाभोगे, पुरिसेवि य छिव्वइ नियमहिलाए ।
णाहायस्स होइ सुद्धि, इय भणियं सव्वलोएसु ॥ ३ ॥

अर्थ—जो कदाचित् अजाणतो थको कोइ पुरुष पोतानी ऋतु धर्म वाली स्त्री ने स्पर्श करे तो स्नानकर्त्यां शुद्धिथाय ए वात सर्व लोक मांहे कहेलीछे ॥ ३ ॥

विहिजिणभवणे गमणं, घरपड़िमा पूअणं च सज्जायं ।
पुप्फवइ इत्थीणं, पड़िसिद्धं पुव्वसूरीहिं ॥ ४ ॥

अर्थ—विधि जिनभवन (मंदिर) विषे जावुं घरमां जिन प्रतिमानी पूजा करवी अने स्वाध्याय करवो एटला वानां ऋतुधर्म

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

वाली स्त्री ने पूर्व सूरियें (पूर्वाचार्य महाराजों ने) निषेध्यां छे ॥ ४ ॥

आलोअणा न पडइ, पुप्फवइ जं तवं करे नियमा ।
नविअ सुत्तं अन्नं, ता गुणइ तिहिं दिवसेहिं ॥ ५ ॥

अर्थ—ऋतुधर्मवाली स्त्री त्रणदिवस सुधी गुरुपासें थी आलोयण लेवाने अर्थे पोतानुं पाप प्रकाशे नहीं वली तपस्या न करे नियम करे नहीं सूत्र गुणे (भणे) नहीं वली अन्यपण कोई भाषण न करे ॥ ५ ॥

लोए लोउत्तरिए, एवं विहदंसणं समुद्दिट्ठं ।
जो भणइ नत्थि दोसा, सिद्धांतविराहगो सो उ ॥ ६ ॥

अर्थ—लोकमांहे तथा लोकोत्तर एटले जिन शासनमांहे एवी रीते ऋतुवंती स्त्री हांडलादिक टामने जिनप्रतिमा ने आभडे त्यां तेने घणा महोटा दोष लागे ए कह्यं जे कहे छे के एमां दोष नथी ते सिद्धांतना विराधक जाणवा ॥ ६ ॥

तपगच्छाधिराज भट्टारक श्रीहीरविजय सूरि प्रसादी कृत हीरप्रश्नोत्तर ग्रंथ में भी लिखा है कि—

जिनगृहे निशायां नाट्यादिकं विधेयं न वा ? जिनगृहे निशायां नाट्यादिविधेर्निषेधो ज्ञायते यदा उक्तं—रात्रौ न नंदिर्नबलिः प्रतिष्ठा । न स्त्रीप्रवेशो न च लाश्यकीला ॥ इत्यादि किंच क्वापि तीर्थादौ तत् क्रियमाणं दृश्यते तत्तु कारणिकमिति बोध्यं ॥

अर्थ—श्रीजिनमंदिर में रात्रि को नाटक पूजादि भक्ति करनी वा नहीं ? (उत्तर) श्रीजिनमंदिर में रात्रि को नाटक

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

पूजादि भक्ति करना यह विधि निषेध है क्योंकि शास्त्रों में कहा है कि श्रीजिनमंदिर में रात्रि में नंदि निषेध बलि पूजा तथा प्रतिष्ठा निषेध श्रीजिनमंदिर में रात्रि को स्त्रियों का प्रवेश (आना) निषेध नाटक पूजा भक्ति रात्रि को निषेध है कोई तीर्थादि में वह करने में आता हुआ देखते हैं सो तो कारणिक है ऐसा जानना और भी लिखा है कि—

श्राद्धानां रात्रौ जिनालये आरात्रिकोत्तारणं युक्तं न वा ? श्राद्धानां जिनालये रात्रौ आरात्रिकोत्तारणं कारणे सति युक्तिमन्नान्यथा ॥

अर्थ—श्रावकों को रात्रि में श्रीजिनमंदिर में आरति पूजा करनी युक्त है वा नहीं ? (उत्तर) श्रावकों को श्रीजिनमंदिर में रात्रि में आरती पूजा करनी कारण हो तो युक्त है अन्यथा रात्रि को श्रीजिनमंदिर में आरती पूजा करनी युक्त नहीं है तथा—

कायोत्सर्गस्थितजिनप्रतिमानां चरणादिपरिधापनं युक्तं न वा ? जिनप्रतिमानां चरणादिपरिधापनं तु सांप्रतानव्यवहारेण न युक्तियुक्तं प्रतिभाति ॥

अर्थ—कायोत्सर्गस्थित श्रीजिनप्रतिमा के चरण आदि अंग को वस्त्र पहराने रूप पूजा युक्त है वा नहीं ? (उत्तर) श्रीजिनप्रतिमा के चरण आदि अंग को वस्त्र पहराने रूप पूजा वर्त्तमान काल के व्यवहार से युक्तियुक्त नहीं भासती है—

यह श्रीजिनप्रतिमा की वस्त्र पूजा का निषेध तथा वर्त्तमान काल में श्रीजिनप्रतिमों की चंदन विलेपनादि से अंग पूजा करती हुई बहुत तरुण स्त्रियों को ऋतुधर्म होता है इसी अभिप्राय

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

से उन तरुण स्त्री को श्रीमूलनायक जिनप्रतिमा की केवल चंदन विलेपनादि से अंगपूजा का निषेध आशातना और अधिष्ठायक-देव का लोप दुःकर्मबंध इत्यादि नहीं होने के लिये उपर्युक्त महानुभावों के वचन उचित विदित होते हैं, सो तपगच्छ के श्रीआनंद सागरजी द्वेष भाव के दुराग्रह को त्याग कर स्वपरहित के लिये सत्य स्वीकार करें अन्यथा निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर आशातना न हो इत्यादि शास्त्रप्रमाण संमत सत्य प्रकाशित करें—

शासन सम्राट आ.भ.
श्री विजय नेमिसूरिश्वरजी म.सा. नां शिष्यरत्न
प.पू.आ.भ. श्री पद्मसूरि ग्रंथालय
दादा साहेब, भावनगर

प्रतिमा की महा-
च को प्राप्त होकर
ती है इसी लिये
ऋतुवंती स्त्री को
करना मानते हो
तिमा की चंदन
स्त्रियों को अत्यंत
प्रतिमाधिष्ठायक
ादि होते हैं वास्ते
की चंदन विलेप-
हो ?

ा की अंग पूजा
कर परंतु आशातनादि कारण से कोई पुरुष वा कोई स्त्री श्रीजिनप्रतिमा की अंग पूजा नहीं करें ऐसा तपगच्छवालों का मंतव्य वा उपदेश है या नहीं ?

३ [प्रश्न] इस दुषम काल में तरुण स्त्री को कभी १० या १५ दिने कभी २० दिने और कभी २५ दिने इस तरह अनियम से बेटेम अकस्मात् ऋतुधर्म होता है उससे श्रीजिनप्रतिमा

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com